SEMESTER -IV (THEORY)

Examination to be held in the year 2016, 2017 & 2018

Course No. MU-401 (THEORY)

Title : Indian Music -Applied Theory and History of Indian Music
Maximum Marks : 40
Theory External Examination: 32
Internal Assessment : 08

SECTION - A

(I) Prescribed Ragas :

1. Bihag
2. Kedar
3. Main Ki Todi

(II) Writing of any one of the Chota Kayal (Dhrut) or Vilambit Khayal or Razakhani or Maseetkhani gat in Pandit V. N. Bhatkhandey notation system from the prescribed ragas with few Tanas or Todas.

(III) Writing of detailed definitions and compare and contrast of the prescribed ragas

(VI) Writing of below mentioned Talas with full definitions giving single and double laykaries in Pandit V. N. Bhatkhandey notation system :-

(i) Teevra
(ii) Rupak
(iii) Deepchandi (including previous Talas)
(iv) Adachantal

SECTION B

1. Detailed study of the following styles of singing :
   Dhrupad, Dhamar, Tappa, Thumri, Chaturang, Tarana
2. Gram Moorchana

3. Detailed study of Dakshini Tal Padhiti

4. History of Indian Music during Medieval period with special refrence to books/Granths.

5. Origin of Bhatkhandey notation system its development, merits and demerits.

6. Different Gharanas of Music Vocal and Instrumental (Sitar).

7. Classification of Ragas during ancient period.

8. Knowledge of the following books :-

   (i) Natya Shastra (ii) Sangeet Ratnakar

DT Internal Assessment (Total Marks 08) (20%). 08 Marks for Theory paper in the subject reserved for Internal Assessment shall be distributed as under :-

(i) Class Test : 04 Marks

(ii) Two Written Assignments : 04 Marks (02 Marks each)

NOTE FOR PAPER SETTING:

There will be two sections in the question paper containing three questions in 'A' Section and four Questions in 'B' Section. The candidate will be requried to attempt two questions from 'A' Section). One of seven marks each) and three questions from 'B' Section (One of Six marks each).

BOOKS RECOMMENDED :-

1.	Sangeet Visharad	:	Vasant
2.	Sangeet Shastra Darpan (Part I,II and III)	:	Shanti Goverdhan
3.	Rag Parichaya (Part I,II and III)	:	H. C. Shrivastav
4.	Sulabh Sangeet Shastra (Part III)	:	R. N. Telegaonkar
5.	Karamik Pustak Malika (Part II & III)	:	V. N. Bhatkhande
6.	Rag Prabhakar	:	R. K. Vyas
7.	Hamare Sangeet Ratan	:	L. N. Garg
8.	Sitar Malika	:	L. N. Garh

Course No. MU-401 **Section-A**

Semester - IV **Lesson-1**

1.0 Prescribed Ragas:- Bihag, Kedar, Mian Ki Todi

1.1 Introduction

1.2 Objective

1.3 राग बिहाग की स्वर लिपि –बड़ा ख्याल

1.3.1 राग बिहाग की स्वर लिपि –छोटा ख्याल

1.4 राग केदार की स्वर लिपि – बड़ा ख्याल

1.4.1 राग केदार की स्वर लिपि – छोटा ख्याल

1.5 राग तोडी की स्वर लिपि – बड़ा ख्याल

1.5.1 राग तोडी की स्वर लिपि – छोटा ख्याल

1.6 Examination Oriented Questions.

1.7 References/ Books consulted

1.1 INTRODUCTION

A raga is akin to a melodic mode in Indian classical music. While the raga is a remarkable and central feature of classical Indian music tradition. Each raga is an array of melodic structures with musical motifs, considered in the Indian tradition to have the ability to "color the mind" and affect the emotions of the audience.

A raga consists of at least five notes, and each raga provides the musician with a musical framework. The specific notes within a raga can be reordered and improvised by the musician. Each raga has an emotional significance and symbolic associations such as

with season, time and mood. The raga is considered a means in Indian musical tradition to evoke certain feelings in an audience.

3.2 OBJECTIVE

Each raga of Indian classical music has a different unique quality which differentiates these rags from each other. Every ragas has some distinct characteristics depending on its mood and time. These subtle differences between these ragas make them unique. So it is important for a music listener and a learner to know and learn these subtle and unique differences between these ragas and keep these aspects in mind while performing and demonstrating these ragas.

1.3 राग बिहाग की स्वर लिपि –बड़ा ख्याल

बड़ा ख्याल–राग बिहाग –ताल एकताल

स्थायी – कैसे सुख सोवे नीन्दरिया

श्याम मूरत चित चडी

अंन्तरा – सोये सोय सदारंग अकुलावे

या विधि गांठ परी

नी	धमपध	गम	पम	ग	रेनी	सा	सा	नीसा	गम	प प	गमग
कै	ऽऽऽऽ	से	सुख	सो	ऽऽ	वो	ऽ	नीं ऽ	ऽ ऽ	द ऽ	रिऽया
		ऽ									
३		४		x		०		२		०	
गम	पनी	सां	नीरें	सां	सां	नीधम	पध	ग म	ग	गमपम	गरेनीसा
श्याऽ	ऽम	मू	ऽर	त	ऽ	चिऽऽ	ऽऽ	त ऽ	ऽ	चऽऽऽ	डीऽऽऽ
		ऽ									
३		४		x		०		२		०	

अन्तरा–

गम	पनी	सां	नीरें	सां	सां	पनी	सग	रें		सां		नीध	मंप,		
सोऽ	ऽय	सो	ऽऽ	य	ऽ	सदा	रंग	अ		कु		लाऽ	येऽ		
३		४		x		०		२				०			
नी	मंप	गम	ग	गमपध	गम	गरे	नीसा	नीसगम		पऽगम		गमपम		गरेनीस	
या	ऽऽ	विऽ	धि	गँऽऽऽ	ऽऽ	ठऽ	ऽऽ	पऽऽऽ		ऽऽऽऽ		डीऽऽऽ		ऽऽऽऽ	
३		४		x		०		२				०			

1.3.1 राग बिहाग की स्वर लिपि –छोटा ख्याल

राग बिहाग–छोटा ख्याल–ताल तीनताल

स्थायी – झनन झनन तोरी बाजे पैजनियाँ
लचक लचक तोरी चाल मोहनियाँ।

अन्तरा – नैन बसी री साँवरी सूरत
लिपटत दधि माखन मुख बइयाँ।।

सा	म	म	म	ग	रे	नि़	स	सा	प	म	प	ग	म	ग	ग
झ	न	न	झ	न	न	तो	श्री	बा	ऽ	जे	पै	ज	नि	याँ	ऽ
०				३				x				२			
ग	म	प	नी	सां	रें	नी	सं	नी	ध	मं	प	ग	म	ग	ग
ल	च	क	ल	च	क	तो	री	चा	ऽ	ल	मो	ह	नि	याँ	ऽ
०				३				x				२			

अन्तरा –

ग	म	प	नी	सां	–	सां	सां	नी	ध	नी	सां	नी	ध	मं	प
नै	ऽ	न	ब	सो	ऽ	री	ऽ	साँ	ऽ	व	री	सू	ऽ	र	त
०				३				x				२			
ग	म	प	नी	सां	रें	नि	सां	नी	ध	मं	प	ग	म	ग	ग
लि	प	ट	त	छ	धि	मा	ऽ	ख	न	मु	ख	ब	इ	याँ	ऽ
०				३				x				२			

1.4 राग केदार की स्वर लिपि – बड़ा ख्याल

बड़ा ख्याल–रोग केदार–ताल एकताल

स्थायी – सिया रघुबर की छवि देखी

राम नाम हैं प्यास जीवन की–।।

अन्तरा – प्राण तन में जब लग मेरो

नैनन में बसी मूरत सिया रघुबर की–।।

स्थायी–

ध	मंप	मरे	निसा	म	मरे	प	धप	म	रेसा	नीरे	सासा
सि	याऽ	ऽऽ	रघु	ब	ऽर	की	ऽऽ	छ	विऽ	देऽ	खीऽ
३		४		x		०		२		०	
म	रेसा	नीरे	सासा	म	मरे	पमं	धप	मंपधनी	सांनीधप	मंपधप	ममरेसा
रा	ऽम	नाऽ	ऽम	है	ऽऽ	प्याऽ	ऽस	जीऽऽऽ	ऽऽऽऽ	वऽनऽ	कीऽऽऽ
३		४		x		०		२		०	

अन्तरा–

प	सांसां	सं	नीरें	सां	सां	म	रेंसां	नीरं	सांसा	धऽनीध	मंप
प्रा	ऽण	त	ऽन	में	ऽ	ज	ऽब	लऽ	गऽ	मेऽऽऽ	रोऽ
३		४		x		०		२		०	
सां	धप	मं–धप	मम	ध	मंप	मम	रेसा	मरे	पमं	धध	मंप
नै	ऽऽ	ननऽ	मेंऽ	ब	ऽसी	मूऽ	रत	सिया	रघु	बर	कीऽ
३		४		x		०		२		०	

1.4.1 राग केदार की स्वर लिपि – छोटा ख्याल

छोटा ख्याल–राग केदार–ताल तीनताल

स्थायी– बरखा रात की चाँदनी में
बरसत रस देखो बूँद–बूँद–

अन्तरा– बाँसुरी बजावत सब को रिझावत
गावत सब मिल राग केदार–1

स्थायी –

ध	प	म	ऽ	रे	सा	सा	रे	नि़	स	म	घ	म	रे	प	म
ब	रा	खा	ऽ	रा	त	की	ऽ	ऽ	ऽ	चाँ	ऽ	ऽ	द	नी	में
		०				३				x				२	
मं	प	ध	नी	ध	प	मं	प	ध	–	म	म	रे	सा	सा	सा
ढ	श्र	स	त	श्र	स	दे	ऽ	खो	घ	बूँ	ऽ	छ	बूँ	ऽ	छ
		०				३				x				२	

अन्तरा–

प	प	प	प	सां	घ	रें	सां	मं	मं	रें	सां	ध	नी	ध	प
बाँ	सु	री	ब	ज	घ	व	त	स	ब	को	रि	झा	घ	व	त
०				३				x				२			
म	प	ध	नी	सां	नी	ध	प	मं	प	ध	प	म	म	ध	प
गा	घ	व	त	स	ब	मि	ल	श्रा	घ	ग	के	दा	र	ब	र
०				३				x				२			

1.5 राग तोडी की स्वर लिपि – बड़ा ख्याल

बड़ा ख़्याल–राग तोड़ी–ताल एकताल

स्थायी– तोरी छवि मो मन ही मन भावे,
अधिक सुहावे।

अन्तरा– सात सखी मिल देत मुबारक,
गावे बजावे सुंदर सुधर रिझावे।

स्थायी–

प	प	म	प	ग	ग	म	ध	मघनीऽ	सां	निघ	ऽध ऽतो
रा	ऽ	ऽ	छवि	मो	ऽ	म	न	हीऽऽऽ	ऽऽ	मऽ	प
३		४		x		०		२		०	न

गऽ	रेऽगरे	स	स	ध	नीऽनोघ	सा	सारे	सारे	सारेगऽ
भाऽ	ऽऽऽऽ	ऽ	ऽ	ट	धिऽऽऽ	क	ऽसु	हाऽ	ऽऽऽऽ
३		४		x		०		२	
रेरे	साध								
वेऽ	ऽतो								
०									

अन्तरा

म	गग	म	पऽमघ	सं	सं	नीरें	सां	सारेंगऽ	रेंसां
स	ऽऽ	त	ऽऽऽस	खी	ऽ	मिऽ	ल	देऽऽऽ	त्मु
३		४		X		०		२	
नीऽसांनी	धप								
बाऽऽऽ	रक								
०									

ग	रें सां	नीऽ	सांसां	नी	धध	नीध	पप	ग	मध
ग	वे ब	जाऽ	वेऽ	सुंऽ	छर	सुऽ	घर	रि	ऽऽ
३		४		x		०		२	
मग रेग	रेसा	ऽध							
झाऽ वेऽ	ऽऽ	ऽतो							
०									

1.5.1 राग तोडी की स्वर लिपि – छोटा ख्याल

छोटा ख्याल–राग तोड़ी–ताल तीनताल

स्थायी – पुनि पुनि मिलत परत गहि चरना,
परम प्रेम कछु जाइ न बरना।

अन्तरा – सब नारिन मिल भेटि भवानी,
जाइ जननि उर पुनि लपटानी।

स्थायी–

रे	ग	रे	स	नी	ध़	सा	श्रे	ग	ग	ग	म	ग	रे	स	स
पु	नि	पु	नि	नि	ल	त	प	र	त	ग	हि	च	र	न	ऽ
0				३				x				2			

म	ग	म	ध	नै	नी	सां	सां	नी	ध	प	प	मप	धप	मग	रेसा
प	र	म	प्रे	ऽ	म	क	छु	ज	ऽ	इ	न	बऽ	रऽ	नाऽ	ऽऽ
0				३				x				2			

अन्तरा –

म	ग	म	ध	सं	सां	सां	सां	संरें	गं	रे	सां	नी	संनी	ध	प
स	ब	ना	ऽ	रि	न	मि	ल	भेऽ	ऽ	टि	भ	व	ऽऽ	नी	ऽ
0				३				x				2			
घ	गं	रें	सां	नी	घ	प	म	ग	म	प	ध	मप	धप	मग	रेसा
जा	ऽ	इ	ज	न	नि	उ	र	पु	नि	ल	प	टाऽ	ऽऽ	नीऽ	ऽऽ
0				३				x				2			

1.7 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS :-

1. Write down the notation of Raag bihag (vilambit Khayal) in batkhandey notaion system.
2. Write down the notation of Raag bihag (Drutt Khayal) in batkhandey notaion system.
3. Write down the notation of Raag Kedar (vilambit Khayal) in batkhandey notaion system.

4. Write down the notation of Raag Kedar (Drutt Khayal) in batkhandey notaion system.

5. Write down the notation of Raag Todi (vilambit Khayal) in batkhandey notaion system.

6. Write down the notation of Raag Todi (Drutt Khayal) in batkhandey notaion system.

1.8 References/ Books consulted

1. Kramik pustak malika
2. Raag Darpan
3. Raag Parichay

*****

Course No. MU-401 **Section - A**

Semester - IV **Lesson - 2**

2.1 Introduction

2.2 Objectives

2.3 Raag Bihag

- 2.3.1 Definition
- 2.3.2 Aalaap
- 2.3.3 Mseetkani Gat and Todas
- 2.3.4 Razakhani Gat and Todas
- 2.3.5 Jhaala

2.4 Raag Kedar

- 2.4.1 Definition
- 2.4.2 Aalaap
- 2.4.3 Mseetkani Gat and Todas
- 2.4.4 Razakhani Gat and Todas
- 2.4.5 Jhaala

2.5 Raag Miyan Ki Todi

- 2.5.1 Definition
- 2.5.2 Aalaap
- 2.5.3 Mseetkani Gat and Todas
- 2.5.4 Razakhani Gat and Todas
- 2.5.5 Jhaala

2.6 Conclusion

2.7 Glossary

2.8 Short Answer Question

2.9 Lesson End Exercise, Examination Oriented Questions

2.10 Suggested Reading

2.11 References

2.12 Model Test Paper

2.1 INTRODUCTION प्रस्तावना

गायन वादन तथा नुत्य इन तीनों के समावेश से संगीत की परिभाषा दी जाती है। संगीत में गायन का अनुसरण सदैव वाद्यों द्वारा किया जाता है। उसी प्रकार गायन एवं वादय दोनों के रागों में भी समानता पाई जाती है। आगे के अध्याय में हम अपने विषय से सम्बधित रागों का विस्तार से अध्ययन करेंगें। जिसमें रागों का परिचय, उनकी गतें, मसीतखानी गत, रजाखानी गत तोडों सहित और अन्त में झाला दिया गया है।

2.2 OBJECTIVE उदेश्य

संगीत में भावों को वयक्त करने के लिय प्रत्येक विधा की अपनी शैली है। जिसमें गायन की अपनी कुछ अलग शैली हैं उसी प्रकार वाद्यों का भी अपना एक अस्तित्व है। उसी प्रकार से वाद्य पर गायकी अगं का वादन तो किया ही जाता है परन्तु वाद्यों पर तन्त्रकारी अगं का भी वादन किया जाता है। आगे के अध्याय में सितार वाद्य से सम्बधित सामग्री दी गई है और जिससे सितार की शैली को समझा जा सके। वर्तमान में जो भी अंग सितार पर बजाया जाता है वो ध्रुवपद से अत्यधिक प्रभावित है क्योकि सितार में जोड झाला पूर्ण रूप ध्रुवपद का ही अगं है।

2-3 राग विहाग

2-3-1 (परिचय) Definition आरोह– नि़ सा ग, म प, नि सां।

अवरोह– सां नि, ध प, म प ग म ग, रे सा।

पकड़ – नि़ सा, ग म ग, प म ग म ग, रे सा।

थाट– बिलावल

वादी– ग

सम्वादी– नि

जाति– औडव–सम्पूर्ण

समय– रात्रि का दूसरा प्रहर

स्वर– तीव्र मध्यम के अतिरिक्त अन्य स्वर शुध प्रयोग होते हैं।

वर्जित स्वर– आरोह में ऋशभ एवं धैवत

2-3-2 स्वर विस्तार

1. सा, नि़ सा ग S रे सा, नि़ सा, सा नि़ ध़ प़ नि़ सा ग, रे सा, नि़ सा ग, ग मग रेसा।

2. नि़ सा ग, म ग, प मे ग म ग, सा म, ग प, मे प, ग म ग, ग म प S ग मग रे सा, नि़ सा ग S रे सा, नि़ प़ नि़ सा।

3. ग म प, ग म प नि S ध प, म प ग म ग, ध प, मे प ग म ग, मप नि S नि ध प, मे प गमग, सा ग म प S ध प ग म ग रे सा, नि़ सा ग मग ग, रे सा।

4. ग म प नि, प नि सां, प नि सां गं रें सां, ग म प नि ध प, म प नि सां रें सां नि S ध प, ग म ग S ग म प नि, ध प, म प ग म ग, नि़ सा ग म ग, रे सा।

2-3-3 विहाग विलम्बित गत

तीनताल

स्थायी–

		गम	पनि संनि ध प
		दिर	दिर दिर दा रा
ग ग ऱसा निसा	ग मम प म	गम गरे सा	
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दिर दिर दा	
		गरे	सा निनि ध़ प़
		दिर	दा दिर दा रा
प़ निनि सा सा	ग मम प मप	गम गरे सा	
दा दिर दा रा 0	दा दिर दा रा 3	दिर दिर दा X	 2

अन्तरा

		पप	ग मम प नि
		दिर	दा दिर दा रा
सां सां नि नि	प निनि सां मं	गं रें सां	
दा रा दा रा	दा दिर दा रा	दा दा रा	
		गंमं	गं रेंरें सां सां
		दिर	दा दिर दा रा
नि ध प पप	मे पप ग म	ग रे सा	
दा दा रा दिर 0	दा दिर दा रा 3	दा दा रा ×	 2

तोड़े– मसीतखानी गत सम से मुखडे तक

1. निसामग रेसानिसा गमप– मगरेसा | निसागम पनिधप मगरेसा निसागम | पनिसांनि धपमग रेसानिसा
2. निसागम पनिसारें सांनिधप मगरेसा | निसागम पनिसांग्रं रेंसांनिध पमगरे | निसागम पनिसां–मंगरेंसां

2.3.4 रजाखानीगत त्रिताल

स्थाई

सा मम ग प	म प ग म	ग –ग म	ग रे सा नि
दा दिर दा रा	दा रा दा रा	दा ऽ दा रा	दा रा दा रा
		Type equation he	
प़ – नि़ सा	ग – रे सा	ग मम प म	ग रेरे स नि
दा ऽ दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दा रा
0	3	×	2

अन्तरा

ग – ग म	म मम पप म	प नि – नि	सां नि सां सां
दा ऽ दा रा	दा दिर दिर दा	दा रा ऽ दा	दा रा दा रा
प निनि सां सां	गं रे सां नि	प ग – म	ग रे सा सा
दा दिर दा रा	दा रा दा रा	दा रा ऽ दा	दा रा दा रा

03×2

तालबद्द तोड़े

8 मात्रा के तोड़े

1 नि़सा गम पनि सांगं । सांनि धप मग रेसा ।
2 गम पनि सांगं रेंसां । निध पम गम ग–।
3 पम गम ग– रेसा । निसा गम पनि सा–।
4 पनि सांनि धप मप । गम पम गरे सा– ।
5 गम पम पनि पनि । सांनि धप मग रेसा ।
× । 2

16 मात्रा के तोड़े

खाली से (9 मात्रा से)

1 नि़सा गम पम गम । गग रेसा नि़सा गम ।
पनि सारें सांनि धप । पम गम गरे सा– ।

2 मग रेसा नि़सा गम । पप मग रेसा नि़सा ।
निनि धप गप गम । पम गम गरे सा– ।

3 गम पनि पनि सांगं । रेंसां निध पम गम ।
पनि सारें सांनि धप । मप गम गरे सा– ।

4 पनि सांगं सांगं मंगं । रेंसां निध पम गम ।
पनि पनि सांनि धप । मप गम गरे सा– ।

2.3.5 झाला

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ
म ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	मं ऽ ऽ ऽ	पं ऽ ऽ ऽ	मं ऽ ऽ ऽ
गं ऽ ऽ ऽ	गं ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	निऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
प ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ
सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ	सांऽ ऽ ऽ

तिहाई (गंगं रेंरें सांनिं धप पम गम गरे सासा) –3

सम से आरम्भ |

गम पनि सां– गम पनि सां– गम पनि

गम पनि सां– गम पनि सां– गम पनि

गम पनि सां– गम पनि सां– गम पनि सां

2.4 राग केदार

2.4.1 परिचय

आरोह–सा म, म ^{ग}प, ध प, निध सां।

अपरोह– सां नि ध प, मं प ध प म, रे सा।

पकड़ –सा, म, म प, म$^{|}$प ध प, म रे सा।

थाट– कल्याण

वादी– म

सम्वादी– सा

जाति– औडव–शाडव

समय– रात्रि का प्रथम प्रहर

स्वर– दोनों मध्यम के अतिरिक्त अन्य स्वर शुध प्रयोग होते हैं।

वर्जित स्वर– आरोह में ऋशभ एवं गान्धार तथा अवरोह में केवल गान्धार

स्वर विस्तार

2.4.2

1. सा म, म प, $^{|}$म प ध प, सा म रे सा, सा नि़ ध़ प, सा रे सा ।
2. सा म, म प, म प ध, म ग म प, ध प, म रे सा रे सा।
3. सा रे सा म, मं प ध प, म ग मं प ध प, सां सां ध प, म प म ग म रे सा।
4. सा म, म प नि ध, सां रें सां, सां मं रें सां, ध प म प ध, म प, म रे सा, सा रे सा।

2.4.3 राग केदार विलम्बित गत (मसीतखानी गत)

स्थायी

		मम	गग म मप सां
		दिर	दिर दादिर दा
सां सांसां निनि	ध मंम प धप	मम रेरे सा	
दा रा दा दिर	दा दिर दा रा	दिर दिर दा	
		मरे	सा सा म मम
		दिर	दा रा दा दिर
प निध सांसां	नि धध प मंप	धप मरे सा	
दा दिर दा रा	दा दिर दा दिर	दिर दिर दा	

अन्तरा

		पप	सां सां नि निनि
		दिर	दा दादा दिर
सां सां नि नि	सां सांरें सां मं	मंमं रेंरेंसां	
दा रा दा रा	दा दिर दा रा	दिरदिर दा	
		मंमं	रें रेंरें सां सां
		दिर	दा दिर दा रा
नि ध प पप	म पप म म	मरेरे सा	
दा रा दा दिर	दा दिर दा रा	दा दिर दा	

0 3 × 2

मसीतखानी गत के गोड़ेसम से मुखडे तक

1. नि़सारेसा नि़साममम रेसानि़सा ममरेसा | नि़सामंप धपमम रेसानि़सा मपसां | पनिसांनि़ धपमम रेसानि़सा

2. ममरेसा मंपधप ममरेसा धनिधप | मंपधप ममरेसा निनिधप मंपधप | ममरेसा सांसांनिनि धपमप

2.4.4 रज़ाखानीगत त्रिताल

प पप ध ध	प – प प	म –म म	– रे सा नि़
दा दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा ऽ दा रा	ऽ रा दा रा
0	3		2
सां – सां सा	म – पप प प	म – म मग	प पप मंप धप
दा ऽ दा रा	दा ऽ दिर दा रा	दा ऽ दा दिर	दा दिर दिरदिर
0	3	×	2

अन्तरा

प – प सां	सां – सां सां	सां – सां सां	सां रें सां सां
दा ऽ दा रा	दा ऽदा रा	दा ऽ दा रा	दा रा दा रा
0	3	×	2
प – प प	ध – प प	ममग म रे	सा रे सा सा
दा ऽ दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा रा दा रा
0	3	×	2

तोड़े रज़ाखानी गत सम से मुखडे तक 8 मात्रा के तोडे

1 सारे नि़सा मम रेसा । मप धप ममरेसा ।

2 मम रेसा मप धप । मम रेसा नि़सा रेसा ।

3 मप सांसां सांनि धप । मप धप मम रेसा ।

4 धनि सारें सांनि धप । मम रेसा मम रेसा।

5 सांनि धप मम रेसा । निनि धप मम रेसा ।

2.4.5 झाला

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
रे ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
म ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
म ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
मं ऽ ऽ ऽ	मं ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ
सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ
ध ऽ ऽ ऽ	प ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ
रे ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ

तिहाई (सांसां निनि धध पप मप धप मम रेसा)– 3

मम रेसा सा– मम रेसा सा– मम रेसा

मम रेसा सा– मम रेसा सा– मम रेसा

मम रेसा सा– मम रेसा सा– मम रेसा सा

2.5 राग तोड़ी

2.5.1 परिचय आरोह– सा, रेग, म ध, नि सां।

अवरोह– सां नि ध प, म गरे, सा।

पकड़ –ध, निसा, रेग, रे, सा म गरेग रे सा।

थाट– तोड़ी

वादी– धैवत

सम्वादी– गान्धार

जाति– सम्पूर्ण

समय– प्रातः काल

स्वर– तीव्र मध्यम के अतिरिक्त रेगध कोमल प्रयोग होते हैं।

स्वर विस्तार

2.5.2 आलाप

1. सा, रेग, रेगरे स, ध़ नि सा रे ग, रेग म ग, रे गरे सा।
2. सा नि ध प़ म ध़ नि़ साऽ नि़ ध़गरेगरे सा, नि़ ध़ नि़ सा रे ग, रे सा।
3. सा रेग, रे ग म ग, सा रेग साऽ रेग मऽ ग, धऽ म गग म ग,रेग, रेऽ सा, नि़ ध़ ऽ सा रेगऽ रेग, रे सा।
4. ग म ध, म ध म गऽ रेग म ध, म ध नि ध, म ध ऽ प, म ग, म ध ऽ म ध नि सां ध, नि ध, म ध सांऽ नि ध, म ध, म धऽ म ग,रेग म गरेगरे सा।
5. म ध सां, नि ध म ध सां, ध नि सां गं रें, रेंगरें सां, रेंगंऽ रें सां, गंगरेंगंरें सां नि धगं रें सां, म ध नि सां, नि ध, म ध नि ध सां नि धऽ ध प, म ध ऽ म गरेग, रे सा।

2.5.3 तोड़ी मसीतखानी गत

स्थायी

		मग	रेरे सा धनि सारे
		दिर	दिर दा दिर दिर
गग सा निसा	ग मम ध निनि	रेग रेरे सा	
दा रा दा दिर	दा दिर दा दिर	दिर दिर दा	
		गरे	सा निनि ध नि
		दिर	दा दिर दा रा
सा निनि सा सा	ग मम प ध	मगरे सा	
दा दिर दा रा	दा दिर दा रा	दिर दा रा	
0	3	×	2

अन्तरा

		मम	ग ममध निनि
		दिर	दा दिर दा दिर
सां सां नि नि	ध निनि सां रें	गंगंरेंरेंसां	
दा रा दा रा	दा दिर दा रा	दिरदिर दा	
		गंमं	गं रेंरें सां सां
		दिर	दा दिर दा रा
नि ध प मम	ध मम ग रे	गरे सा	
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा	
0	3	×	2

तोड़े रेज़ाखानी गत

सम से 11 मात्रा तक

1. सारेगगरेसानिसा सारेगग मगरेसा | सारेगम धमगग

   ममगगरेगरेसा | सारेगम धनिसानि धपमग

2. सारेगगरेगमम गमधध मधनिनि | धनिसांसां धनिसांरेंरेंगंरेंसां

   सांनिधप | मधमग रेगरेसा गगरेसा

2.5.4 रज़ाखानीगत त्रिताल

स्थाई

रे गगरे सा	ध़ निनि़ सा रे	ग–ग म	ग रेगरे सा
दा दिर दा रा	दा दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा
ध़– नि़ सा	ग–रे सा	ग ममं ध़ म	रे गगरेसा़
दा ऽ दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा दिर दा रा
0	3	×	2

अन्तरा

ग–ग म	म ममं ध़ नि	सां – सां सां	सां नि सां सां
दा ऽ दा रा	दा दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा रा दा रा
ध़ निनि सारें सां	रेंगरें सां नि	रें सां नि ध़	गरेगरे सा
दा दिर दिर दा	दिर दा रा दा	दा रा दा रा	दा दिर दा रा
0	3	×	2

तालबद्द तोड़े

8 मात्रा के तोड़े

सम से 8 मात्रा तक

1 सारेगम धनि सारें । सांनि धप मगरेसा ।

2 गमधनि सारेरेंग । रेंसा सांनि धप मग।

3 सारेगगरेगरेसा। मगरेगरेसा नि़सा ।

4 सारेरेग मगगम ।धम गगरेग नि़सा ।

5 सारेगरे गम धम ।धनि सांनि मगरेसा ।

16 मात्रा के तोड़े

सम से

1 सारे गगरेग मम । गम धध मध नि़सा ।धनि सारें सांनि धप । मम रेगगगरेसा ।

2 गगरेसा नि़सा गम । धध मगरेसा नि़सा । गम धनि सारें सांनि । धप मम रेगरेसा ।

3 गमधनि सांनि सारें । सानिं धप मग रेसा ।धनि सारें सांनि धप । मप धम रेगरेसा ।

2.5.5 झाला

1 2 3 4	5 6 7 8	9 10 11 12	13 14 15 16
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
नि़ ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
ग ऽ ऽ ऽ	रे ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ	सा ऽ ऽ ऽ
रे ऽ ऽ ऽ	ग ऽ ऽ ऽ	म ऽ ऽ ऽ	ध ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	रें ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
नि ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
ध ऽ ऽ ऽ	नि ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ
सा ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ	सां ऽ ऽ ऽ

तिहाई (सांसां निनि धध पप मम गगरेरे सासा) –3

सम से आरम्भ और सम तक

सासारेरेग– सासा रेरेग– सासा रेरे

सासारेरेग– सासा रेरेग– सासा रेरे

सासारेरेग– सासा रेरेग– सासा रेरे ग

2-6 **CONCLUSION** सारांष

उपर दी गई सामग्री से हमें यह ज्ञात होता है कि सितार की वादन शैली क्या है और किस प्रकार से वादन किया जाता है जिसमें प्रथम चरण में राग का आरम्भ करते हुए आलाप, जोड झाला , मसीतखानी गत, रजाखानी गत उसके उपरान्त तोड़े तथा अन्त में झाला का वादन किया जाये। यह सम्पूर्ण सामग्री संगीत ही परीक्षा हेतू अत्यंत लाभकारी है।

2-7 **GLOSSARY**

निम्नलिखित सामग्री की रचना करने में संगीत विशारद के शब्दकोश से अत्यंत सहायता प्राप्त हुई।

2-8 **Short Answer Question लघु प्रष्न**

1 राग तोड़ी का वादी स्वर कौन सा है

1 ग 2 नि 3 प 4 सां

2 राग तोडी का समप्रकतिक राग कौन सा है।

3 राग विहाग का पकड क्या है।

4 राग विहाग की जाति क्या है।

5 गुजरी तोडी में कौन सा स्वर लगाने से तौडी राग बनता है

6 राग केदार में कौन सा स्वर प्रयोग नही किया जाता है।

7 राग केदार से मिलते जुलते राग का नाम लिखो।

8 राग तोडी का वह स्वर समूह लिखो, जिससे राग तोड़ी को पहचाना जाता हो।

2-9 **Lesson End Exercise and Examination Question** (परिक्षा से सम्बधित प्रष्न)

1 राग विहाग की उत्पत्ति किस थाट से हुई है।

2 राग विहाग का समप्रकषतिक राग कौन सा है।

3 विहाग और मारू विहाग में क्या अन्तर है।

4 विहाग में तीव्र मध्यम किस स्वर के रूप में लिया जाता है।

5 राग विहाग का प्रारम्भ किस स्वर से किया जाता है।

7 राग विहाग की प्रकति कौन सी है।

2-10 Sugested Reading सहायक पुस्तकें

राग परिचय, हरिशचन्द्र श्रीवास्तव

संगीत शास्त्र दर्पण

संगीत विशारद, प्रभूलाल गर्ग वसंत

संगीत रतनावली अशोक कमार यमन

2-11 (References) सन्दर्भ

सितार प्रबन्ध, डॉ बिरेन्द्र नाथ मिश्र

संगीत सुर और साज, डॉ एस एन मिश्रा

राग परिचय, हरिशचन्द्र श्रीवास्तव

2-12 Model Test Paper मॉडल प्रश्न पत्र

1. राग विहाग और मारू विहाग की तुलना कीजिए
2. राग तोडी और राग गुजरी तोडी की तुलना कीजिए
3. राग विहाग की रजाखानी गत चार तोडों सहित लिखें
4. राग विहाग का परिचय विस्तार पूर्वक लिखें
5. मसीतखानी और रजाखानी गत की तुलना कीजिए

*****

DESCREPTION OF RAGAS

3.1 Introduction

3.2 Objective

3.3 राग बिहाग का परिचय

3.3.1 राग बिहाग का राग शंकरा के साथ तुलनात्मक अद्वयन

- समानताए
- असमानताए

3.4 राग केदार का परिचय

3.4.1 राग केदार का राग हमीर के साथ तुलनात्मक अद्वयन

- समानताए
- असमानताए

3.5 राग तोडी का परिचय

3.5.1 राग तोड़ी का राग मुल्तानी के साथ तुलनात्मक अद्वयन

- समानताए
- असमानताए

3.6 Conclusion

3.7 Examination Oriented Questions.

3.8 References/ Books Consulted

3.1 INTRODUCTION

A raga is akin to a melodic mode in Indian classical music. While the raga is a remarkable and central feature of classical Indian music tradition. Each raga is an array of melodic structures with musical motifs, considered in the Indian tradition to have the ability to "color the mind" and affect the emotions of the audience.

A raga consists of at least five notes, and each raga provides the musician with a musical framework. The specific notes within a raga can be reordered and improvised by the musician. Each raga has an emotional significance and symbolic associations such as with season, time and mood. The raga is considered a means in Indian musical tradition to evoke certain feelings in an audience.

3.2 OBJECTIVE

Each raga of Indian classical music has a different unique quality which differentiates these rags from each other. Every ragas has some distinct characteristics depending on its mood and time. These subtle differences between these ragas make them unique. So it is important for a music listener and a learner to know and learn these subtle and unique differences between these ragas and keep these aspects in mind while performing and demonstrating these ragas.

3.3 राग बिहाग का परिचय

कोमल मध्यम तीख सब, रिध चढ़त को त्याग।
ग नी वादि संवादि ते, जानत राग बिहाग।।

चन्द्रिकासार थाट–बिलावल।

स्वर एवं जाति – इस राग के आरोह में रिषभ और धैवत का प्रयोग नहीं होता और अवरोह में सभी स्वर लगते हैं इसलिए इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण है। सभी स्वर शुद्ध लगते हैं परन्तु अवरोह में एक निश्चित प्रकार से अनुवादी स्वर के रूप में तीव्र मध्यम का प्रयोग किया जाता है।

वादी–गान्दार। सम्वादी–निषाद।

न्यास के स्वर–सा, ग, प नी। अंग–पूर्वांग प्रधान राग है।

आरोह –नि़ सा ग म प नी सां।

अवरोह – सां नी ध प मे प, ग म ग, रे नि़ सा।

पकड़ – नि़ सा ग म प, मे प, ग म ग, रे सा।

विशेषता–इस राग के अवरोह में तीव्र मध्यम का प्रयोग पहले विवादी स्वर के नाते होता था पर आजकल इस स्वर ने अनुवादी स्वर का स्थान पा लिया है। बल्कि इस स्वर के प्रयोग को राग के मुख्य स्वर–समूह के रूप में जाना जाता है। तीव्र मध्यम का प्रयोग एक विशिष्ट प्रकार से होता है जैसे–प म ग म ग, धपमप ग म ग। अवरोह में रे ध स्वरों का प्रयोग दुर्बलता से किया जाता है। अवरोही तानों में जरूर इन स्वरों का उपयोग पूर्ण तरीके से करते है। यह एक गम्भीर प्रकशति का राग है और इसका विस्तार मध्य एवं मन्द्र सप्तक में करते हैं। आलाप में–ग म प ध ग म ग–यह स्वर–समूह अधिक प्रयोग होता है। पूर्वांग वादी राग होने के कारण यह रात्रिकालीन राग है।

3.3.1 राग बिहाग का राग शंकरा के साथ तुलनात्मक अद्वयन

समानताए

1. इन दोनों रागों की उत्पति बिलावल थाट से हुई है।
2. इन रागों का आरोही औडव है।
3. दोनों रागों के आरोह में रिशभ स्वर वर्जित है।
4. इनका वादी स्वर गंधार एवं वादी स्वर रिशभ है।
5. इनका गाने का समय रात्रि का द्वतीय प्रहर है।
6. यह दोनों राग पूर्वांगवादी राग है।
7. इन दोनों रागों के अवरोह में रिशभ तथा धैवत का प्रयोग अल्प है।
8. दोनों राग वीर रस से आत प्रोत है।

असमानताए

1. बिहाग राग के आरोह में रिषभ और धैवत का प्रयोग नहीं होता और अवरोह में सभी स्वर लगते हैं इसलिए इसकी जाति औडव–सम्पूर्ण है। परंतु राग षंकरा की जाति औडव–औडव है।
2. बिहाग राग में विवादी स्वर के नाते तीव्र मध्यम का प्रयोग होता है। राग शंकरा में विवादी स्वर प्रयोग नही होता है।
3. बिहाग राग का गंधार राग शंकरा की अपेक्षा नीचा है।

4. बिहाग राग में पूर्वांग के चलन में रिषभ का प्रयोग राग शंकरा की अपेक्षा अदिक है।

5. मध्यम स्वर का प्रयोग दोनों रागों को भिन्न करता है।

3.4. राग केदार का परिचय

मध्यम दै तीवर सबहिं आरोहत रिग हान।
सम संवादी वादितें केदारा पहिचान।।

–चन्द्रिकासार

इस राग की उत्पत्ति कल्याण थाट से हुई है। राग हमीर की तरह इसमें भी दोनों मध्यमों का प्रयोग होता है। तीव्र मध्यम का प्रयोग पंचम के साथ आरोह में होता है। फिर भी इस राग की ऐसी विशेषता है कि कभी–कभी दोनों मध्यम एक के बाद एक ले लिये जाते हैं। इस राग का वादी स्वर शुद्ध मध्यम है और संवादी स्वर षड्ज है। चूँकि आरोह में रे और ग स्वर तथ अवरोह में ग स्वर का प्रयोग नहीं होता है इसलिए इस राग की जाति औड़व–षाड़व है। इस राग को गाते समय षड्ज से मध्यम पर जाते हैं। अवरोह में कोमल निषाद का अल्प प्रयोग विवादी स्वर के रूप में किया जाता है। इस राग का गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है और सा, म, प स्वरों पर न्यास किया जाता है। राग हमीर और कामोद इस राग के समप्रकृत राग है। केदार राग में गंधार का प्रयोग नहीं किया जाता है क्योंकि फिर यह राग कामोद और बिलावल के बहुत निकट हो जाता है। राग केदार के और चार प्रकार प्रचार में हैं जो कि शुद्ध केदार, चाँदनी केदार, जलधर केदार और मलुहा केदार हैं। आरोहात्मक स्वरों में मध्यम पर गंधार का कण देने से राग की सुन्दरता बढ़ जाती है।

आरोह –सा म, ग, प ध प, नी ध, सां ।

अवरोह – सां नी ध प, मे' प ध प, म रे सा ।

पकड़ – सा म, ग, प, ध प म, रे सा ।

3.4.1 राग केदार का राग हमीर के साथ तुलनात्मक अद्वयन

समानताए

1. इन दोनों रागों की उत्पत्ति कल्याण थाट से हुई है।
2. इन दोनों रागों के आरोह में निशाद स्वर वक्र है तथा अवरोह में गंधार वक्र है।
3. दोनों रागों अवरोही का अंत गमरेसा सव्रों से किया जाता है।
4. इनका गायन समय रात्रि का प्रथम प्रहर है।
5. आरोह मे नी अवरोह मे ग दुर्बल है।
6. दोनों रागों में निशाद का प्रयोग विवादी स्वर के नाते होता है।

असमानताए

1. राग केदार की जाति औडव–सम्पूर्ण है। परंतु राग हमीर की जाति सम्पूर्ण है।
2. केदार का वादी स्वर मध्यम तथा संवादी स्वर शडज है। राग हमीर का वादी स्वर धैवत तथा संवादी स्वर गंधार है।
3. कभी कभी केदार के अवरोह में दानो मध्यम एक साथ गाते है परंतु राग हमीर में दानों मध्यम एक साथ नही आते।
4. केदार राग का सोंदर्य सामप स्वरों पर आधारित है। राग हमीर का सोंदर्य गमप स्वरों पर आधारित है।

3.5. राग तोडी का परिचय

राग तोड़ी

तीखे मनि कोमल रिगध वादी धैवत साज।
संवादी गंधार है टोडी राग विराज।।

–चन्द्रिकासार

यह राग अपने ही थाट तोड़ी से उत्पन्न होता है और इसलिए यह राग अपने थाट का आश्रय राग है। इस राग में मध्यम स्वर तीव्र और रिषभ, धैवत और गंधार कोमल लगते हैं। निषाद स्वर शुद्ध लगता है। चूँकि आरोह एवं अवरोह में सभी स्वरों का प्रयोग होता है इसलिए इसकी जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है। इस राग का गायन समय दिन का दूसरा प्रहर मानते हैं। इस राग में वादी स्वर धैवत तथा संवादी स्वर गंधार है। पंचम का प्रयोग कम करते हैं। इस राग में रिषभ, गंधार एवं धैवत स्वरों पर राग का सम्पूर्ण वैचित्रय निर्भर करता है। राग मुल्तानी में भी इसी प्रकार के स्वरों का प्रयोग होता है परन्तु उसमें गंधार, पंचम और निषाद स्वर उभरते हैं। न्यास के स्वर सा, ग, ध हैं,। कुछ स्वर–समुदाय इसमें बार–बार लगाये जाते हैं–जैसे रे ग रे सा रे ग म ध प, सांनी ध प घ म ग रे ग रे सा। कहतें हैं कि इस राग की रचना मियाँ तानसेन ने की थी। इसीलिए इसको मियाँ की तोड़ी भी कहा जाता है। तोड़ी में गंधार अति कोमल यानी कोमल से कुछ उतरा हुआ लगता है। मुल्तानी राग इसके बहुत निकट है इसलिए मुल्तानी से बचाने के लिए तोड़ी में–नि़ सा ग म प –स्वर–समूह का प्रयोग नहीं करते है। पंचम का अल्प प्रयोग करते हैं क्योंकि एकदम न लगाने पर राग गुजंरी तोड़ी हो जाता है। गंधार स्वर इसमें स्वतन्त्र रूप से बिना किसी दूसरे स्वर की छाया के आता है। आलाप की समाप्ति पर रे ग रे सा यह स्वर–समूह जरूर कहते हैं। हालाँकि इस राग में उत्तरांग वादी है और गायन समय दिन के बारह बजे के पूर्व का है फिर भी मन्द्र सप्तक उतना ही प्रमुख है जितना कि अन्य कोई

दूसरा सप्तक। इस राग की प्रकृति गम्भीर है और कठिन राग होते हुए भी बहुत सुमधुर राग है। मींड़, गमक इत्यादि का इस राग में खूब प्रयोग होता है। विद्यार्थियों को विकृत स्वरों का प्रयोग इस राग में कुशलता से करना चाहिये। तोड़ी के अन्य प्रकार भी हैं जैसे, गुर्जरी तोड़ी, बिलासखानीतोड़ी, भूपाल तोड़ी, बहादुरी तोड़ी, अंजनी तोड़ी, लाचारी तोड़ी इत्यादि। गुर्जरी तोड़ी और मुल्तानी इस राग के समप्रकृति राग हैं।

आरोह– सा रे ग मे घ प मे घ नी सां।

अवरोह–सां नी ध प म ग रे सा।

पकड़–ध नी सा, रे ग रे सा, मग रेग रेसा।

3.5.1 राग तोड़ी का राग मुल्तानी के साथ तुलनात्मक अद्वयन

समानताए

1. इन दोनों रागों की उत्तपति तोड़ी थाट से हुई है।
2. यह दोनों राग गंभीर प्रकशति के राग है।
3. यह दोनों राग प्राचीन राग है।
4. इनमें करण रस की निशपति होती है।
5. इन दोनों रागों के कुछ स्वरों मे साम्य है. गमप सांनीधप नीध नी धप मग रेसा

असमानताए

1. राग तोड़ी अपने थाट का आश्रय राग है। राग मुल्तानी अपने थाट का जन्य राग है।
2. राग तोड़ी की जाति सम्पूर्ण –सम्पूर्ण है। परंतु राग मुल्तानी की जाति औडव–सम्पूर्ण है।
3. राग तोडी का वादी स्वर धैवत तथा संवादी स्वर गंधार है। राग मुल्तानी का वादी स्वर पंचम तथा संवादी स्वर शडरुज है।
4. राग तोडी का गाने का समय रात्रि का द्वतीय प्रहर है। राग मुल्तानी का गाने का समय रात्रि का व्रतीय प्रहर है।

3.6 CONCLUSION

उपरोक्त रागों का विवरण जानने के बाद हमे राग बिहाग राग केदार व राग तोडी का विस्त्रत रूप में स्वरूप पता चलता है तथा इन रागों का इनके संप्रव्रतिक रागों के साथ तुलना का भी ज्ञात होता है।

3.7 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS :-

1. Write down the description of raag Bihag.
2. Compare between raag Bihag and raag Shankara.
3. Write down the description of raag Kedar.
4. Compare between raag kedar and raag Hamir.
5. Write down the description of raag Todi.
6. Compare between raag todi and multani.

3.8 REFERENCES/ BOOKS CONSULTED

1. Kramik pustak malika
2. Raag Darpan
3. Raag Parichay

*****

4.0 Description of Talas

4.1 Introduction

4.2 Objective

4-3. ताल तीव्रा का परिचय

4-3.1 ताल तीव्रा की स्वर लिपि

4-4 ताल रूपक का परिचय

4-4.1 ताल रूपक की स्वर लिपि

4-5 ताल दीपचंदी का परिचय

4-5.1 ताल दीपचंदी की स्वर लिपि

4-6. ताल आड़ाचार का परिचय

4-6.1 ताल आड़ाचार की स्वर लिपि

4.7 Conclusion

4.8 Examination Oriented Questions.

4.9 References/ Books consulted

4.1 INTRODUCTION

A Tala some times spelled Taala,Taal or Tal, literally means a "clap, tapping one's hand on one's arm, a musical measure". It is the term used in Indian classical music to refer to musical meter, that is any rhythmic beat or strike that measures musical time. The measure is typically established by hand clapping, waving, touching fingers on thigh or the other hand, verbally, striking of small symbals, or percussion instrument.

Tala in the Indian tradition embraces the time dimension of music, the means by which musical rhythm and form were guided and expressed.While a tala carries the musical meter, it does not necessarily imply a regularly recurring pattern. In the major classical Indian music traditions, the beats are hierarchically arranged based on how the music piece is to performed. The most widely used tala in the South Indian system is adi tala.In the North Indian system, the most common tala is teental.

4.2 OBJECTIVE

Taal and laya is considered as the base of music and in Indian classical music talas and different layakaris have more importance than the music in any other part of the world.Talas with different number of beats and dugun, tigun, chougun etc. layakaris makes Indian classical music more innovative and adds to its aesthetic value. So its impotant for us to understand the taal paksha(taal aspect) along with the swaras and ragas.

4-3 ताल तीव्रा का परिचय

तीव्रा ध्रुपद व रूपक ख़्याल शैली का ताल है। दोनों तालों का रूप 3, 2, 2 होते हुए भी रूपक का सम अपवाद रूप में खाली पर मानने से तीव्रा और रूपक भिन्न हो जाते हैं। तीव्रा में भी अपवाद रूप ही कहिए, उत्तर भारतीय ताल पद्धति के अनुसार खाली नहीं है। इसमें केवल तीन ताल हैं। इस ताल के रूप भी सामान्य रूप में 'छंद' नाम से प्रचलित है। 'श्रीनंदन' ताल संगीत रत्नाकार, भरतार्णव तथा संगीत चूड़ामणि में उपलब्ध है, जिसका रूप सात मात्रा का मिलता है। इसके दो लघुओं को यदि गुरु कर दिया जाए तो रूपक व तीव्रा का क्रम परिवर्तित रूप मिलता है। अभिनवताल–मंजरी के अनुसार :–''लोक–भाषा में जो तेवरा व त्रिपुटा नाम से प्रसिद्ध ताल है, उसे सुमति श्री शार्गदेव ने संगीत–रत्नाकर में 'अन्तरक्रीड़ा' कहा है। इसकी सात कलाओं को एक द्रुतविराम व दो द्रुत में विभाजित करके तथा तीन आघातों की योजना करकें चतुर वादक मधुरता से बजाते हैं।'' इसके वर्तमान स्वरूप में सात मात्राओं के तीन, दो, दो के तीन विभाग हैं। पहली मात्रा पर सम अर्थात् पहली ताली, चौथी और छठी मात्रा पर क्रमशः दूसरी और तीसरी ताली पड़ती है। इसका स्वरूप इस प्रकार हैः–

4-3-1 ताल तीव्रा की स्वर लिपि

ताली–	X			1		2	
मात्रा	1	2	3	4	5	6	7
बोल	धा	दिं	ता	तिट	कत	गदि	गन

4.4 ताल रूपक का परिचय

दक्षिणी पद्वति का रूपक छः मात्रा का है, जिसका रूप प्राचीन छः मात्रा के रूपक से बहुत कुछ मिलता है। सात मात्रा के रूपक का प्रयोग लोक–गीतों में भी मिलता है। भक्त कवियों की रचनाओं में इस ताल के रूप वाली कई रचनाएं मिलती हैं। दक्षिणात्य तालों में से त्रिपुट का त्रयश्रजाति रूप रूपक तथा तीव्रा के समान ही है। जगदेकमल के अनुसार रूपक नाम का ताल प्राचीन देशी तालों के क्रम में भी मिलता हैः जिसका रूप 'ऽऽ।।'–इस प्रकार छः मात्रा का है। अभिनव ताल मंजरी के अनुसार सात मात्राओं की जो ताल लोक में रूपक नाम से प्रसिद्ध है, उसे श्री निःशंक शार्गदेव ने 'संगीतरत्नाकर' में 'तृतीय कहा है। इसमें पहले निःशब्द अथवा खाली युक्त द्रुत, फिर एक द्रुत व अन्त में एक द्रुतविराम व दो आघात हैं। चतुर वादक गण अत्यन्त विलम्बित व द्रुत लय के गीतों के साथ इसे सुन्दरतापूर्वक बजाते हैं।'' इसके वर्तमान व्यवहृत स्वरूप के अनुसार इसमें सात मात्राओं को तीन विभागों में बांटा जाता है। ये विभाग क्रमशः तीन, दो, दो मात्राओं के होते हैं। यह ताल शास्त्र के इस नियम का उल्लंघन करती है कि प्रथम मात्रा पर हमेशा ताली ही होनी चाहिए। अतः इसकी प्रथम मात्रा पर खाली है। चौथी मात्रा पर पहली तथा छठी मात्रा पर दूसरी ताली है। इसका स्वरूप इस प्रकार है :–

4.4.1 ताल रूपक की स्वर लिपि

ताली–	0			1		2	
मात्रा	1	2	3	4	5	6	7
बोल	ति	ति	ना	धि	ना	धि	न

4.5 ताल दीपचंदी का परिचय

दीपचंदी चौदह मात्राओं की ताल है। इसको स्पष्टतः झूमरा ताल का ही भेद माना जाता है, क्योंकि इसमें भी क्रमशः एक द्रुतविराम, एक लघु, एक निःशब्द द्रुत विराम व अंत में एक

1. अप्पा तुलसी काशीनाथ, अभिनवताल–मंजरी, अनुवादक पुरु दाथीच, पृ. 14, 151

2. आचार्य कैलाशचन्द्र देव बश्हस्पति एवं सुलोचना बश्हस्पति, राग रहस्य, पृ, पृ. 21

दीपचंदी, दादरा तथा कहरवा आदि तालों का व्यवहार लोक संगीत के लिए कहा गया है। इन तालों में सोहर, कजरी, चैती, होरी, चौमासा, मल्लार, सावन, रसिया तथा बारहमासा आदि लोक–गीत गाए जाते हैं। इन तालों में भिन्न–भिन्न रूपों के दर्शन भिन्न–भिन्न प्रदेशों में प्रचलित लोक–संगीत में होते हैं। इनमें प्रयुक्त मात्राओं के भिन्न–भिन्न क्रमों पर जोर, जरब तथा लचक आदि की किंचित भिन्नता से तालों के रूप बदल जाते हैं। वर्तमान दीपचन्दी चौदह मात्राओं की बन्द बोलों की ताल है। अतः इसका वादन मुख्यतः तबले पर किया जाता है। इस ताल की चौदह मात्राओं

को तीन–चार, तीन–चार मात्राओं के चार विभागों में विभाजित किया गया है। इस ताल की पहली मात्रा पर सम अर्थात् पहली ताली, चौथी मात्रा पर दूसरी ताली, आठवीं मात्रा खाली और ग्यारहवीं मात्रा पर तीसरी ताली पड़ती है। आधुनिककाल में इस ताल का प्रचलित तालों में प्रमुख स्थान है। इसका स्वरूप इस प्रकार है :–

4.5.1 ताल दीपचंदी की स्वर लिपि

ताल–x			2				0			3			
मात्रा–1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
बोल–धा	धीं	ऽ	धा	धा	धीं	ऽ	ता	तीं	ऽ	धा	धा	धीं	ऽ

4.6 ताल आड़ाचार का परिचय

आड़ाचौताल वर्तमान में गुणीजन प्रयुक्त ताल है। कुछ लोग इसे ध्रुपदांगी और कुछ लोग ख़्यालांगी ताल कहते हैं। इस ताल में ध्रुपद भी मिलते हैं और ख़्याल भी। इसको मृदंग पर भी बजाया जाता रहा है, परन्तु आजकल तबले पर अधिक बजाया जाता है। इस ताल में ख़्याल शैली में प्रयुक्त ठेका एकताल के ठेके का भी परिवर्तित रूप लगता है। इसका मृदंग में बजने वाला ठेका–ठीक इसके नामकरण के समान चौताल के ठेके का परिवर्तित रूप लगता है। इसमें भी चार ताल हैं। चौताल से अंतर केवल यह है कि दो मात्रा बढ़ाकर और प्रारम्भ में दो ताली लगातार चौताल के सीधे रूप को आड़ा–तिरछा अथवा वक्र रूप दे दिया गया है।

कुछ लोगों के अनुसार यह ताल अमीर खुसरो की रचना है। ग्रन्थोक्त प्राचीन तालों की परम्परा में 'जनक ताल' चौदह मात्रा का ताल है। इसका उल्लेख भरतार्णव, संगीत चूड़ामणि तथा संगीतरत्नाकर तीनों ग्रन्थों में एक रूप में '।।।।ऽऽ।।ऽऽ' इस प्रकार मिलता है। संगीत चूड़ामणि में इस ताल का उल्लेख कई परम्पराओं के आधार पर किया गया है, परन्तु सब में इसका रूप एक समान ही है। इस ताल के लघु का यदि गुरु में परिवर्तन कर दिया जाए तो, आड़ाचौताल का रूप आसानी से बन जाता है। अष्टछापीय संगीत परम्परा में 'चम्पकताल' प्रसिद्ध है, जिसे अर्धआड़ाचौताल' भी कहा जाता है। इसी परम्परा में आड़ाचौताल का सम्बन्ध प्राचीन ध्रुवताल से माना जाता है। विशेष उल्लेखनीय है कि अटाछाप के कवियों की रचनाओं में भी 'ध्रुवताल' का अनेक स्थानों पर उल्लेख मिलता है।

तलसी राम देवांगन के अनुसार अष्टछापीय परम्परा में यह 'ध्रवताल' के नाम से प्रयुक्त है। के. वासुदेवशास्त्री आड़ाचौताल को कर्नाटक सम्प्रदाय की अड्ताल की खंडजाति एवं ध्रुवताल की चतुश्र जाति का परिवर्तित रूप मानते है। अतः चौताल के समान आड़ाचौताल का भी किसी न किसी रूप में ग्रन्थों व मौखिक परम्पराओं में अन्यताल नामों से उल्लेख मिलता है। अभिनवताल–मंजरी के अनुसार लोगों द्वारा चौदह मात्रा की जो अन्य ताल जानी गई है, वह आड़ा चौताल है। इसे संगीतरत्नाकर में 'चतुंरताल' कहा गया है। इसमें एक द्रुत व तीन लघु तथा चार आघात होते हैं। इसके वर्तमान व्यवहश्त स्वरूप में चौदह मात्राएं एवं दो–दो मात्राओं

लय एवं ताल

आड़ाचार के सात विभाग हैं। इसका स्वरूप इस प्रकार है :–

4.6.1 ताल आड़ाचार की स्वर लिपि

ताल–x		2		0		3		0		4		0	
मात्रा–1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
बोल–धिं	तिरकिट	धि	ना	तू	ना	क	ता	तिरकिट	धिं	ना	धि	धि	ना

4.7. CONCLUSION

इस प्रकार हमने ताल तीव्रा का परिचयए ताल तीव्रा की स्वर लिपिए ताल रूपक का परिचय एव ताल रूपक की स्वर लिपिए ताल दीपचंदी का परिचय एव ताल दीपचंदी की स्वर लिपिए ताल आड़ाचार का परिचय एव ताल आड़ाचार की स्वर लिपि व इन तालो के विवर्ण के बारे मे जाना।

4.8 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. ताल तीव्रा का परिचय व स्वर लिपि लिखे।
2. ताल रूपक का परिचय व ताल रूपक की स्वर लिपि लिखे।
3. ताल दीपचंदी का परिचय व ताल दीपचंदी की स्वर लिपि लिखे।
4. ताल आड़ाचार का परिचय व आड़ाचार ताल की स्वर लिपि लिखे।

4.9 REFERENCES/ BOOKS CONSULTED

1. संगीत रतनावली

*****

DHRUPAD, DHAMAR, TAPPA, THUMRI, CHATURANG, TARANA

1.1 Introduction.

1.2 Objectives.

1.3 Dhrupad.

1.4 Dhamar.

1.5 Tappa

1.6 Thumri

1.7 Chaturang

1.8 Tarana

1.9 Sum up.

1.10 Examination Oriented Questions.

1.11 References/Books consulted

1.1 INTRODUCTION

As this is a fact that change is the law of nature so, music also has undergone various changes from time to time. According to the changing temperament and mood of the layman/commonman, due to changeh in time various styles of singing came into existence. In this topic the student will come to know about these types of singing.

1.2 OBJECTIVES

After studying this topic the pupils will came to know about the various silient features of these distinct (vivid) forms of singing. Afterwards they are ought to become capable of differenciating between these different forms of singing.

1.3 ध्रुपद – अभी तक सर्वसम्मति से यह निश्चित नहीं हो पाया है कि ध्रुपद का आविष्कार कब और किसने किया इस संबंध में विद्वानों के कई मत है अधिकांश विद्वानों का मत यह है कि पन्द्रहवीं शताब्दी में ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर ने इसकी रचना की। जो कुछ हो इतना तो निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि राजा मानसिंह तोमर ने ध्रुपर के प्रचार में बहुत हाथ बंटाया। अकबर के समय में तानसेन और उनके गुरु स्वामी हरिदास डागुर, नायक बैजू और गोपाल आदि प्रख्यात गायक ध्रुपद की गाते थे।

ध्रुपद गम्भीर प्रकृति की गीत है इसे गाने में कण्ठ और फेफड़े पर जोर पड़ता है इसलिए लोग इसे मर्दाना गीत कहते है इसका प्रचलन मध्यकाल में अधिक था और आजकल जनरूचि में परिवर्तन होने के कारण इसका स्थान ख्याल ने ले लिया है। अधिकांश ध्रुपद के चार भाग हैं, स्थाई, अंतरा, संचारी और आभोग। इसके शब्द अधिकतर ब्रजभाषा के होते हैं। इसमें वीर, शांति और श्रृंगार रस की प्रधानता होती है। यह चार ताल, ब्रहाताल, तीवरा, मत आदि तालों में गाया जाता है जो पखावज के ताल हैं।

ध्रुपद की संगति पखावज ऐसे गम्भीर वाद्य से होती है। ध्रुपद में सर्वप्रथम नोम तोम का सविस्तार आलाप किया जाता है। आलाप के भी चार अंग होते हैं। आलाप के भी चार अंग होते हैं। आलाप अपने तीसरे अंग में लयबद्ध हो जाता हैं, और उसकी गति धीरे–धीरे बढ़ाई जाती है। इसी स्थान से गमक का प्रयोग प्रारम्भ होता है। ध्रुपद में खटके अथवा तान के समान चपल स्वर समूह नहीं प्रयोग किए जाते; बल्कि भीड़ और गमक का विशेष प्रयोग होता है। आलाप के पश्चात् ध्रुपद के चारों भाग गाए जाते हैं और फिर विभिन्न प्राकर की लयकारियां दिखाते है। ध्रुपद में लयकारी का विशेष स्थाप प्राप्त है गीत की बन्दिश को लेकर और उसके शब्दों को लेकर विभिन्न बोल बनाए हुए लयकारी का अधिक विस्तार करते हैं। प्राचीन काल में ध्रुपद गाने वाले को कलावन्त कहा जाता था। आजकल गीत की बन्दिश को विभिन्न लयकारी में बोलते हैं। प्राचीन काल में ध्रुपद की चार शौलियां थीं जिन्हें बानी कहते थे। बानियां चार थीं – खण्डार, नौहार, डागुर अज़ैर गोबरहार। आजकल ध्रुपद अधिकतर चार ताल में गाया जाता है इस प्रकार के ध्रुपद से हम सब परिचित हैं।

1.4 धमार – यह भी गीत का एक प्राचीन प्रकार हैं इसे होरी भी कहते है। यह धमार ताल में होता हैं तथा इसमें अधिकतर राधा कृष्ण और गोपियां अथवा ब्रज की होली का वर्णन मिलता है। इसमें भी ध्रुपद के समान नोम तोम का आलाप तथा लयकारी विशेष महत्त्व रखती है। इसमें दून, तिगुन, चौगुन आदि लयकारियां अधिकतर गीत के शब्दों को लेकर दिखाई जाती है और गंमक का खूब प्रयोग होता है। खटके अथवा तान के समान स्वर समूह वर्ज्य है। कुछ

संगीतज्ञ इसमें सरगम भी बोलते है; किन्तु यह ख्याल के सरगमों से भिन्न होता है। ध्रुपद अथवा धमार के प्रत्येक अंग में गम्भीरता रहती है जैसे कि हम पीछे बता चुके है कि कुछ विद्वान् इसे होरी भी कहते है; किन्तु यह उचित नहीं है होरी और होली में केवल र अथवा ल का अंतर संगीत कि प्रारम्भिक विद्याथियों एवं संगीत प्रेमियों के लिए भ्रामक होता है अतः सुझाव यह है कि इसे धमार ही कहा जाए और गीत के दूसरे प्रकार को होली या होरी। धमार गीत के साथ पखावज बजाया जाता रहा हैं, किन्तु आधुनिक काल में पखावज का प्रचार कम होने तथा तबले का प्रयोग अधिक होने से अब धमार गीत के साथ तबले का प्रयोग होने लगा है। नीचे जय जयवन्ती राग में एक धमार देखिए –

स्थाई – आज छबीले मोहन नागर, बृज में खेलत होरी।

अंतरा – ग्वाल बाल सब संग सखा, रंग गुलाल की झोरी।

1.5 टप्पा

टप्पा हिन्दी मिश्रित पंजाबी भाषा का श्रृंगार प्रधान गीत हैं इसका उद्‌गम पंजाब के पहाड़ों प्रदेशों में हुआ और अवध के दरबार में ठुमरी के साथ–साथ यह विकसित हुआ।

ख्यला तथा ठुमरी इन दोनों के मध्य की यह गायन शैली अत्यन्त कठिन तथा सूक्ष्म है, जिस पर निरन्तर अभ्यास के उपरान्त ही अधिकार प्राप्त किया जा सकता है। टप्पा की रचना अधिकतर पंजाबी भाषा में होने से इस गायन शैली का पंजाब प्रांत से अटूट संबंध दृष्टिगोचर होता है यही कारण है कि कुछ लोग इस शैली की उत्पत्ति पंजाब तथा सिंध में प्रचलित 'टप्पे' नामक लोग –गीतों से हुई मानते हैं। परंतु शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत गेय टप्पा गायन पंजाब के इस लोकगीतों से पूर्णतः शोरी मियों का नाम टप्पा गायन शैली के अविष्कार के लिए प्रसिद्ध है। शोरी मियां 18वां शताब्दी में लखनऊ के नवाब आसफउद्दौला के काल में हुए थे। आप पंजाब प्रांत में भी कुछ समय तक थे और पंजाब भाषा भी आपको भलीभांति आती थी।

आपने कई टप्पे पंजाबी भाषा में रचे।

संगीत कला परिवर्तनशील है और इसमें समय–समय पर अनेक गायन शैलियों का स्वाभाविक विकास होता रहा है। टप्पा गायन शैली के विषय में भी यहीं कहा जा सकता है।

'टप्पा' पंजाब भाषा के टप्पना' शब्द से गृहीत है, जिसका अर्थ होता है उछलना अथवा कूदना। 'टप्पा' गायन को सुनकर इसका नाम सार्थक प्रतीत होता है। इसकी प्रकृति चंचल, लच्छेदार, तानें, मुर्की, खटका आदि से ज्ञात होता है। कि ख्याल तथा ठुमरी की गम्भीरता से यह अत्यन्त दूर ह। ख्याल के प्रारम्भ में गले को बिना कष्ट दिये बढ़ते अथवा विस्तार करते है, विशेष स्वरों पर ठहरा भी जा सकता है, परंतु 'टप्पा का आरम्भ से ही बोलो की छोटी–छोटी दानेदार तानों से सुसज्जित करना पड़ता है, सूक्ष्मति सूक्ष्म दाने पिरोने पड़ते हैं। टप्पा में स्वरों पर विशेष रूकावट नहीं हुआ करती। टप्पा में बोल आलाप का स्थान नहीं है।

टप्पा गायन के लिए खास अभ्यास की आवश्यकता होती है गायक को इसमें प्रयुक्त दानेदार तानों को विशेषतः तैयार करना पड़ता है। लय तथा ताल को अधिकृत करने तथा बोल उच्चरण व बोल तानों के लिए निरन्तर प्रयास की आवश्यकता होती है। गायकी कठिन होने से टप्पा पर अधिकार पाना सरल नहीं हैं। यही करण है कि आज कल यह गायकी बहुत कम सुनने में आती है।

विभिन्न ख्याल गायन की तरह टप्पा गायन में घराने नहीं पाये जाते । हां, इस गायकी के प्रस्तुतीकरण में थोड़ा– बहुत अंतर हम अवश्य पाते है। ग्वालियर में प्रचलित टप्पा में ख्याल की कुछ छाया दिखलाई पड़ती है, जबकि बनारस में गेय टप्पा वहां के लोकगीतों तथा दुसरों से अधिक प्रभावित है।

टप्पा की चाल न अधिक धीमी और न अधिक तेज होती है। इस गायन शैली में चीज के मुखड़ों को आनंद से निर्मित कर ताल के सम पर आने का विशेष महत्व होता है। यही करण है कि इस गायन के साथ जिन तालों का प्रयोग होता है, उनकी लय झूमती रहती है। इस गायकी के साथ 16 मात्राओं के ताल अधिक प्रचार–प्रसार में हैं, जिनमें पंजाबी, अद्धा तीन ताल अधिक उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त पश्तों ताल में भी टप्पे गाये जाते है।

टप्पा की चंचल प्रकृति के लिए श्रृंगार रस की अधिक अनुकूज है। जिस रागों में ठुमरी गायी जाती है, ज्यादतार उन्हीं रागों में टप्पा की रचना भी होती है, जैसे भैरवी, रबमाज, काफी, झिंझोटी, गारा, तिलंग, पीलू, इत्यादि। इसके अलावा ख्याल गाये जाने वाले कुछ रागों में भी टप्पा गेय है।

1.6 ठुमरी

ठुमरी मध्यकाल की एक प्रचलित, भाव प्रधान तथा चंचल प्रकृति की श्रृंगारिक गायन शैली है। इस शैली में स्वर व लय के साथ–साथ काव्य पक्ष का भी अत्यधिक महत्त्व रहता है। शब्दों को कोमलता तथा विशिष्ट प्रकार के भावों के साथ–साथ राग का व्यवहार ठुमरी की विशेषता है। उत्तर भारतीय शास्त्रतीय संगीत में ठुमरी ऐसा गीत है, जिसमें शास्त्रीय और लोक संगीत दोनों के तन्व विद्यमान है। ठुमरी लोक–संगीत की भांति सहज रूप में प्रवाहित होंने वाला न होकर व्यक्तिप्रधान विस्तार से उत्पन्न होने के कारण शास्त्रीय है, किन्तु शास्त्रीय संगीत की तरह नियमों के कड़े बंधन से मुक्त होने के कारण लोक–संगीत के गुणें से भी युक्त है। इसमें लौकि और आध्यत्मिक दोनों प्रकार का श्रृंगार रहता है। इसलिए अनके अनूकुल कोमल शब्दावली और अपेक्षाकृत कोमल रागों का ही प्रयोग होता है। भावभिव्यक्ति ही दृष्टि से रागशुद्धि जरूरी नहीं। कभी–कभी कई रोगों का मिश्रण और व्यवहार किये जा रहे राग से भिन्न स्वरसंचारों का प्रयोग भी किया जाता है। आधार षड्ज़ से भिन्न किसी स्वर पर आधार स्वर बना कर विभिन्न रागों का प्रभाव लाना इस शैली की विशेषता है।

हृदय की मधुर अनुभूतियों को भावानाओं से सराबोर करके दीपचंदी की बलखाती लय में जो गीत गाए जाते हैं, उन्हें हम ठुमरी कहते है। 19वीं शताब्दी में ठुमरी गायक – गायिकाओं को समाज से सम्मान नहीं मिलता था। वे लो निम्नकोटि के कहे जाते थे। धीरे–धीरे समय ने बदला और अच्छे–अच्छे गायक भी ठूमरी शैली को अपनाने लगे।

उत्तर प्रदेश के लखनऊ और बनारस के कुशल गायकों ने ही इस गायिकी का प्रचार किया। इसमें प्रेयसी की व्याकुलता या विरह वेदना का वर्णन ही अधिक पाया जाता है। पुराने गायक गाते समय चेहेर पर तावभाव दर्शाते हुए गायन करते थे। अब आंगिक मुद्राओं व चेहरे के हावभाव काा स्थान स्वरों की मंजुल मुर्कियों ने ले लिया है ठुमरियां मिश्र रागों में गाई जाती है। व मधुर लगती है। लोक और शास्त्रीय संगीत के कई प्रकार के मिश्रण के कारण इसे उपशास्त्रीय संगीत के वर्ग में रखा जाता है।

ठुमरी की उत्पत्ति

ठुमरी का जन्म लखनऊ के नवाबों के दरबार में हुआ माना जाता है। विद्वानों का मत है कि इसके आविष्कारक गुलामनबी शोरी अथवा उसके वंशज ही थे। ठुमरी का अधिकतर विकास नृत्य के साथ हुआ। इस गायन शैली का सम्बन्ध गौडी गीति के साथ भी जोड़ा जाता है। ठुमरी की उत्पत्ति के बारे में सामान्य धारण यह है कि अवध के नवाब वाजिद अली शाह के यहां इसका जन्म हुआ। डॉ. गीता पैन्तल के अनुसार ठुमरी की उत्पत्ति कहां से हुई? किसके द्वारा हुई और किन परिस्थितियां के फलस्वरूप हुई? इसके विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। प्राचीन ग्रन्थों में गीत के इस प्रकार का कोई उल्लेख प्राप्त नहीं होता, किंतु निश्चित रूप से यह अनुमान अवश्य लगाया जाा सकता है कि ठुमरी की उत्पत्ति ध्रुपद और ख्याल आदि गायन शैलियों के बाद ही हई? ठुमरी का मूल भरत की प्रासादिकी ध्रुवा और कैशिकी वृत्ति, मंतग के नादावती, गणैला प्रबन्ध और भाषा तथा विभाषा गीति में तथा उसका शार्गदेव के रूपक, रागालप्ति, पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोग संगीत के चैती, बिरहा, कजरी और कबीर के द्वयर्थक पदों को भी माना जा सकता है।

डॉ. विश्वम्भरनाथ भट्ट ठुमरी गीत शैली की उत्पत्ति लोक–गीतों से मानते हैं। इनका विचार है कि विशिष्ट प्रकार के लोग–गीतों ने कालान्तर में विकसित होकर ठुमरी का रूप धारण कर लिया। अतः हम कर सकते है कि चैती व विरहा जैस शृंगारप्रधान लोक–गीतो और कबीर के लौकिक प्रतीकों के सहारे वर्णित पारमार्थिक प्रेम से युक्त पदों से ही ठुमरी का विकास हुआ हैं सम्भवतः वाजिदअली शाह के समय मे ठुमरी का प्रचार–प्रसार अधिक हुआ तथा इसको आश्रय मिला। इसीके कारण वाजिदअली शाह के इसका आविष्कारक माना जाता है। दुसरा शैलियां विभिन्न प्रदेशों या विशिष्ट स्थानों के संगीत से प्रभावित है। डा. गीता पैन्तल का मानना है कि ठुमरी में आंचलित लोक गीतों, यथा पहाड़ी और माहिया आदि लोग धुनों की स्पष्ट झलक मिलती है?

ठुमरी के भेद

रचना के अधार पर ठुमरी दो प्रकार की होती है। 1. बन्दिश या बोलबांट और 2 बोलबनाव की ठुमरी। बंदिश्स की ठुमरी छोटे ख्याल से मिलती–जुलती होती है। इस प्रकार में शब्द अधिक होते है। शब्दों

और बंदिश में कसाब रहता है और मात्राओ के विभाजन का पूरा ध्यान रखा जाता है। इनमें प्रायः रचयिता के नाम और साथ पिया लगा होता है, जैसे कदरपिया तथा सनदपिया आदि। छोटे ख्याल और इसमें मुख्य अंतर यह है कि ठुमरी की भांति ख्याल की बंदिशयों के नाम के साथ पिया नही लगा होता। इन ठुमरियों की बंदिश सुनने से ऐसा लगता है कि 'तन्त' बज रहा है। यह जैसे किसी तराने पर 'बोल' रख दिये हों। आला दर्जे का राग, अच्छा अंग और अच्छी लय उनमें है। इन्हें हम बंधन या 'बंदिश' की ठुमरी कहते है।

इनमें बोलबनाव के लिए गुजाइश नहीं होती और प्रायः बंदिश गाकर थोडा बहुत आलाप तथा तान का काम ख्याल के ढंग से किया जाता है। इनमें त्रिताल, झपताल जैसे तालों का प्रयोग होता है। बोलबनाव की ठुमरियों में शब्द बहुत कम, स्वरों का फैलाव अधिक और छोटी मुर्कियों का प्रयेाग रहता है, जिसके कारण बोलबनाव के लिए बहुत गुंजाइश हो जाती है। ये प्रायः ढीला और लचीली होती है। इनको गाने के लिए विशेष गुणधर्मयुक्त कण्ठ होना जरूरी है, जिससे छोटी–छोटी मुर्कियां, खटके तथा मींड सरलता से निकल सकें। इसके लिए कण्ठ की मधुरता पहला गुण है। ठुमरी के मुख्यरूप से तीन अंग अथवा शैलियां हैं – पूर्वी, पहाड़ी और पंजाबी।

1.7. चतुरंग

यह प्रबन्ध मतंग के काल से प्रचलित रहा है, लेकिन उसके चार खण्डों को चार राग चार ताल और चार भाषा के पदों से गाया जाता था। आज के 'चतुरंग' में चार अंग हैं, चार खण्ड, न हो यह संभव है लेकिन राग और ताल 1–1 ही होते हैं। चतुरंग से सर्वप्रथम पद, फिर तराने के बोल, तब सरगम और अंत में तबला या मृदंग के पाट अथवा किसी अन्य भाषा के शब्द रहते हैं। इस प्रकार स्वर, तन, ताल पद और पाट चतुरंग में ये पांच अंग होते हैं। इस दृष्टि से यह 'संगीत रत्नाकर' के 'वर्ण–स्वर' प्रबन्ध से मिलता है। पं. विष्णु दिगम्बर जी के चतुरंग उत्कृष्ट हैं।

आज कल के चतुरंग में जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है, चार अंग होते हैं।

1. गीत के बोल 2. तराने के बाले 3. सरगम 4. त्रिवत (तबला या मृदंग के बोल)

चतुरंग का कुछ भाग ख्याल की तरह गीत के बोलों का होता है, कुछ भाग में तराने के बोल होते हैं। एक या दो आवर्तन सरगम के होते हैं तथा अन्तिम भाग में तबला – मृदंग के बोल स्वर और ताल में बद्ध होते है। इस प्रकार चार अंगों से एक गीत 'चतुरंग' तैयार होता है। इस गीत को द्रुत लय में छोटे ख्याल की तरह गाते हैं। किन्तु इसमें तानों का प्रयोग ख्याल की उपेक्षा कम होता है।

1.8. तराना

तराना आधुनिक निबद्ध गान का एक मोहक व बहुप्रचलित प्रकार है। यह अन्य निबद्ध गान के प्रकारों से अत्यन्त भिन्न व लोकप्रिय हैं। इसीक विशेषता इसमें प्रयुक्त, गीत की निरर्थकता में हैं। त न री त न दिर तोम लोम,

औ, दा, नी यल आदि अक्षरों से युक्त राग–ताल–बद्ध रचना ही तराना कहलाती है। यद्यपि इसकी शब्द रचना में अर्थ नहीं होता, तथापि अर्थ–विहीन अक्षरों का चुनाव इस ढंग से किया जाता है, जिससे उच्चारण में असुविधा न हो। कुछ बोल सितारा के दा, रा, दिर, द्रे आदि तथा कुछ बोल तबले व पखावज के जैसे न ता कड़ांधा, धुमकिट आदि ही इसमें प्रयुक्त शब्द रचना की अमूल्य निधि है। इस प्रकार तराना–गायकी की सुंदरता शब्दार्थ में न होका विभिन्न स्वर समुदायों में हैं, जो भिन्न–भिन्न प्रकार से लिए जाते है।

तराना के आविष्कर्ता कौन?

तराना के आविष्कर्ता के रूप में विशेषकर अमीर खुसरो का नाम लिया जाता है, जो अरबी के प्रकांड पंडित थे। दिल्ली को बादशाह अल्लाउद्दीन खिलजी के दरबार में उन्होंने महान् संगीतज्ञ नायक गोपाल के मुख से संस्कृत शब्दों से युक्त कोई संगीत रचना सुनी। वे संस्कृत भाषा की अनभिज्ञता के कारण शब्दों को अर्थ तो न समझ सके, पर उस संगीत रचना में प्रयुक्त स्वर–समुदायों को उन्होंने बेहद प्रसन्द किया। इसी से प्रभावित होकर उन्होंने निरर्थक शब्दों को गढ़ दिया। जो तराना नाम से प्रसिद्ध हुए।

परंतु तराना के आविष्कर्ता के रूप में अमीर खुसरों पर विचार करना यहां आवश्यक हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आज अमीर खुसरो का सहित्य उपलब्ध है, परंतु उनके द्वारा रचित एक भी तराना आज उपलब्ध नहीं है।

'भरतनाट्य शास्त्र' जो पांचवी शताब्दी का ग्रन्थ सर्वसम्मति से माना जाता है, मैं वर्णित अनेक गीत–प्रकारों में निगीत एक गीत प्रकार है। निर्गीत को ही बहिगीत भी कहा गया है, इसे निरर्थक गीत भी कहते हैं। इसे आविष्कर्ता नारद माने गए हैं। इस निर्गीत मे स्तोमाक्षरों या शुष्काक्षरों का प्रयोग होता है। सतोमाक्षरों का उपयोग वैदिक काल से भारतीय संगीत में प्रचलित है। इससे सिद्ध होता है कि निरर्थक शब्द–युक्त गीतों का गान भारतीय संगीत में प्राचीन काल से प्रचलित है। समयानुसार उसके रूप में परिवर्तन होता रहा । अमीर खुसरों, फारसी, अबरी और तुर्की के विद्वान थे व ईरानी संगीत के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप से परिचित थे। संभव है, निर्गीत से मिलते जुलत किसी गीत का गान ईरानी व फारसी संगीत में होता रहा हो, इसलिए खुसरों के साथ भारतीय निर्गीतों को भी फारसी भाषा में फारसी भाषा में तरान शब्द से संबोधित किया जाने लगा तथा संस्कृत भाषा के अप्रचार के साथ ही तराना शब्द अधिक प्रचार में आ गया।

'तराना' पूर्णतया शास्त्रीय संगीत का एक प्रकार है। यह राग–तार–बद्ध स्वर–रचना है। तराने में राग और लयदारी का चमत्कार होता है। तराने अधिकांशतः द्रंत लय में ही पाये जाते है। ये प्रचलित किसी भी राग में गाये जा सकते हैं। तराने में प्रयुक्त तालें तीन ताल, द्रुत एक ताल एवं झपताल है।

ख्याल की ही भांति तराने के भी दो अवयव स्थायी और अतंरा होते है। ख्याल में प्रयुक्त गीतों का एक अर्थ होता है, तब कि तराना अपनी निरर्थक शब्द रचना के ही कारण सुप्रसिद्ध है।

छोटी–छोटी ताने लेकर सम पर आने में एक अपना ही आनन्द है जो तराना गायक के साथ–साथ

श्रोतागण को भी अपनी ओर बरबस खींच लेता है। तराने गाते समय सरगम, नाना प्रकार को लय में लेने से, अपना अलग ही सौदर्य बिखेरती है। धीरे–धीरे लय बढ़ाते हुए गायक जब अत्यन्त द्रुत लय पर पहुंच जाता है। तो वह अपने मुख से ही सितार के झाले के समान विविध स्वर–संगतियां लेकर एक ऐसे रस में मग्न का देता है। कि श्रोतागण अपनी व अपने आस–पास की सुध–बुध खो बैठते हैं।

तराना, गायक की तैयारी दिखाने का माध्यम है। ख्याल गायक बड़ा व छोटा ख्याल गाने के पश्चात् ही अपनी तैयारी दिखाने के लिए तराना गाते है। तराना भाव प्रधान गायन न होकर वैचि=य–प्रधान है।

तराना भारतीय संगीत की लोकप्रिय गीत शैली है। यद्यपि इसमें सार्थक शब्दों का प्रयोग नहीं होता तथापि निरर्थक शब्द भी लय, स्वर और कल्पना के से श्रौताओं के ऊपर प्रभाव डालने में सफल हो जाते हैं। इस शैली में गायकी और तंत्रकारी का समन्वित रूप दृष्टिगोचर होता है। झाल का आभास कराने वाले विचित्रता युक्त शब्द गठन, लय चयन आदि कलाकार की बौद्धिक परिष्कृति का परिचय देते हैं। अर्थहीन शब्दों का छंदोबद्ध का अनिबद्ध प्रयोग होने के कारण इसके द्वारा भावभिव्यक्ति को अपेक्षा नहीं की जा सकती। हास्य और अद्‌भुत रस की निष्पत्ति ही इस गीत का लक्ष्य और विशेषता है। इसी विशिष्टता के कारण आजकल तराना का व्यवहार फिल्मी गीतों में भी मुक्त रूप से हो रहा है। नृत्य के साथ तराना की गायकी विशेष प्रभावशाली बन जाती है। परिणास्वरूप नृत्य का गति, लय, भाव, और तराना के वैचि=य के सम्मिश्रण से एक अनोखे वातावरण का निर्माण होता है, जो सहृदय, चंचल, भावुक और मर्मज्ञ सभी प्रकार के श्रोताओं को प्रभावित करने में सफल हो जाता है।

1.9 SUM UP

Enormous amount of modification were done from time to time to different forms of singing keeping in consideration the temperament of the masses so different forms of singing have their own individuality and importance. The pupils will be aware of these.

1.10 EAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. What are different forms of singing?
2. Discuss in detail about the different Banies of Dhrupad.
3. Differenciate between 'Dhrupad' and 'Dhamar' gayaki.
4. Which gaayan shaili is contented with Vir Rasa as well as 'Bhakti Rasa'? Write in detail.

5. Which style of singing is contented with 'Shingar Rasa'? What are the characteristic features of it?

6. Which gayan shaili comprises of 4 angs. Discuss about these 4 angs in detail.

7. Write about the peculiarities of those 2 types of singing which are composed in fast tempr.

1.11 Reference/consulted Book

1. Rag Parichaya

2. Sangeet Visarad

3. Sangeet Ratnawali

******

2.0 Gram and Moorchana

2.1 Introduction.

2.2 Objectives.

2.3 Gram.

2.4 Moorchana.

2.4.1 Types of Moorchana

2.4.2 Utility of Moorchana in Modern times.

2.5 Sum up.

2.6 Examination Oriented Questions.

2.7 References/Books consulted

2.1 INTRODUCTION

In older times there occurred the "Gram" (Scale). By transposing the 'base note' of the gram 7 morchhanas were obtained to construct a form of singing known as jati which was in practice those days. Likewise, Raags are in practice now a days. In this chapter emphasis will be laid on the same.

2.2 OBJECTIVES

Music has originated from the 'Vedas'. To know the depth of music we have to know the roots of it. Similarly to know about the different forms of singing, we have to know about the "Grams" and "MOORCHHNA" which are the roots and buildings blocks of the 'Raag'.

2.3 GRAMS ग्राम

यह तो सर्वविदित है कि भारतीय संगीत का आरम्भ वैदिक काल से होता है अतः नाद से श्रुति, श्रुति से स्वर तथा स्वरों से ग्रामों की उत्पत्तित्त होती है 'ग्राम' शब्द संस्कृत का है जो एक स्थूल वाचक शब्द है। जिस प्रकार लोगों का समूह ग्राम कहलाता है, उसी प्रकार संगीत में स्वरों का समूह ग्राम कहलाता है।

ग्राम शब्द समूहवाची है। जिस प्रकार कुटुम्ब के लोग मिल जुल कर मर्यादा की रक्षा करते हुए रहते हैं उसी प्रकार संवादी स्वरों का वह समूह जिसमें श्रुतियां व्यवस्थित रूप में विद्यमान हों और जो मूर्छना, ग्राम, तान, वर्ण, अलंकार आदि का आश्रय हो वह ग्राम कहलाता है।

जब सप्तक में श्रुतियों को एक व्यवस्थित क्रम में रखा जाये तो उसे ग्राम कहते हैं।

संगीत के प्राचीन ग्रन्थों में हम तीन प्रकार के ग्रामों का उल्लेख मिलता है।

1. षड्ज ग्राम 2. मध्यम ग्राम, 3. गंधार ग्राम

इनमें से मुख्यत : षड्ज व माध्यम ग्राम ही प्रचार में था। गंधार ग्राम का अधिक उल्लेख प्राप्त नहीं होता क्योंकि अपनी अति विशिष्ट विशेषताओं के कारण इसका प्रयोग भूलोक पर न होकर स्वर्ग लोक में होता था।

महर्षि भरत ने नाट्य शास्त्र में दो ग्राम बताए हैं, जिन्हें क्रमशः षड्ज ग्राम तथा मध्यम ग्राम कहते हैं। इनमें आश्रित 22 श्रुतियां है सप्तक में श्रुतियों का क्रम चार, तीन, दो, चार , चार तीन, दो है।

षड्ज ग्राम में षड्ज चतुः श्रुति, ऋिषभ, त्रिश्रुति, गंधार द्विश्रुति, माध्यम चतुःश्रुति, पंचम चतुःश्रुति, धैवत त्रिश्रुति निषाद द्विश्रुति होता है।

मध्यम ग्राम में पंचम तीन श्रुति का रह जाता है और उसकी अंतिम श्रुति को ग्रहण कर लेने के कारण धैवत चतुःश्रुति हो जाता है अर्थात् मध्यम ग्राम में मध्यम चत्रि ुः श्रुति पंचम चतुःश्रुति, धैवत चतुःश्रुति, निषादद्वि श्रुति, षड्ज चतुःश्रुति रे त्रिश्रुति एवं गंधार द्विश्रुति रहता है।

गांधार ग्राम – महर्षि भरत ने इसकी चर्चा नहीं की है। कुछ आचार्यो में गांधार ग्राम का प्रयोग लौकिक विनोद के लिए किया है। नारद की सम्मति के अनुसार गंधार ग्राम का प्रयोग स्वर्ग में ही होता है। इसमें षड्ज स्वर त्रिश्रुति और रिषम द्विश्रृति, गंधार चतुःश्रुति, माध्यम त्रिश्रुति, पंचम त्रिश्रुति, धैवत त्रिश्रुति, निषाद चतुःश्रुति हैं।

उपयुक्त तीन प्रकार की स्वर व्यवस्था में से केवल षड्ज या मध्यम ग्राम ही मुख्यतः प्रचार में रहे। षड्ज और मध्यम ग्राम का अंतर प्रमुख रूप से पंचम स्वर में निहित है। मध्यम ग्राम का पंचम षड्ज ग्राम के पंचम से एक श्रुति नीचा है। षड्ज ग्राम का पंचम सत्रहवीं श्रुति पर और माध्यम ग्राम का पंचम सोलहवीं श्रुति पर स्थिति है।

तत्कालीन वाणी–वाद्यों पर षड्ज और मध्यम ग्राम की ही स्थापना की जाती थी। साथ ही गायन एवं वादन उन्हीं स्वर लिपियों पर होता था। इसी षड्ज ग्राम को आधुनिक परिभाषा में तत्कालीन शुद्ध स्वर मेल अथवा शुद्ध स्वर सप्तक कहना उचित होगा।

प्राचीन ग्रंथों में बार्डस श्रुतियों पर तीन ग्राम

श्रुति सं.	श्रुतिनाम	षड्ज ग्राम	मध्य ग्राम	गांधार ग्राम
1	तीव्रा	–	–	निषाद
2	कुमुद्वती	–	–	–
3	मंदा	–	–	–
4	छंदोवती	षड्ज	षड्ज	षड्ज
5	दयावती	–	–	–
6	रंजनी			ऋषभ
7	रत्तिका	ऋषभ	ऋषभ	–
8	रौद्री	–	–	–
9	क्रौधा	गांधार	गांधार	–
10	वज्रिका	–	–	गांधार
11	प्रसारिणी	–	–	–
12	प्रति	–	–	–
13	मार्जनी	मध्यम	मध्यम	मध्यम
14	क्षिति	–	–	–
15	रक्ती	–	–	–
16	संदीपती	–	पंचम	पंचम
17	आलापिनी	पंचम	–	–
18	मदंती	–	–	–
19	रोहिणी	–	–	धैवत
20	रम्या	धैवत	धैवत	–
21	उग्रा	–	–	–
22	क्षोभिणी	निषाद	निषाद	–

2.4 मूर्च्छना

प्राचीन संगीत प्रणाली में 'मूर्च्छना प्रकरण' बहुत महत्वपूर्ण था। ग्रंथों में मूर्च्छना की परिभाषा इस प्रकार दी गई है –'क्रमात्स्वराणां सतानमारोहश्चावरोहणम''

अर्थात् किन्हीं भी सात स्वरों की पंक्ति के क्रमानुसार आरोह और अवरोह को मूर्च्छना कहते है।

मुर्च्छना शब्द के यूं तो बहुत अर्थ हैं, जिसके द्वारा राग का विकास होता है और श्रोतागण जिससे मुग्ध होते हैं, उसको मूर्च्छना कहना चाहिए। ऐसा संगीत रत्नकार की टीका में कल्लिनाथ ने कहा है।

प्रत्यक्ष व्यवहार में इनका प्रयोग षड्ज को और षड्ज के द्वारा बाकी सब स्वरों का दूसरे स्वरों के स्थान का सरकाना अथवा स्वर पंक्ति का केन्द्र बदलना है। इसी को पाश्चात्य प्रणाली में Change of key अथवा Modulation कहते है।

ग्राम तीन है, जिसमे से प्रत्येक की सात–सात मूर्च्छनाएं है। मध्य स्थान के षड्ज स्वर से षड्ज ग्राम की पहली मूर्च्छना आरम्भ होती है। शेष छः मूर्च्छनाएं षड्ज के नीचे के निषादादि स्वरों से शुरू होती है। इस प्रकार तीन ग्रामों से इक्कीस मूर्च्छनाएं शास्त्रकार बताते है। नीचे उनके नाम और स्वर दिए जाते हैं।

2.4.1 मूर्च्छना प्रकार

1. भारतीय संगीत में मूर्च्छना चार प्रकार की थी–

   1. शुद्धा 2. पाड़व

   3. औडव 4. साधारण कृता

1. शुद्धा में सातों शुद्ध स्वर स्थापित किये जाते है।
2. षड्ज में छः स्वर वाली मूर्च्छना होती थी।
3. औड्व में पांच स्वर वाली मूर्च्छना होती थी।
4. 'साधारणकृता' काकली तथा अंतर स्वरों से युक्त थी।

2.4.2 मूर्च्छनाओं की उपयोगिता

प्राचीन काल में राग नाम की कोई वस्तु संगीत में नही थी। 'राग' की जगह उस समय जातियां गाई जाती थीं। ये जातियां कुछ तर्ज थीं, जो कि उस समय सर्व साधारण के प्रचार में थी।

भरत–पद्धति में जाति का वही स्थान है जो आधुनिक पद्धति में राग का। जैसे ठाठ से राग पैदा होता है, वैसे ही मूर्च्छना से जाति उत्पन्न होती है। मूर्च्छनाओं का यही उपयोग था। जैसे आज राग का भेद ठाठ, संवादी, वादी जाति पर निर्भर है वैसे ही जाति पर निर्भर है वैसे ही जाति का भेद मूर्च्छना, ग्रह, अंश, न्यास आदि पर निर्भर था। मूर्च्छना से अनेक जातियों की उत्पति मानी गई।

आज हमारे संगीत में मेल अथवा थाटों का प्रचार होने से मूर्च्छनाओं की आवश्यकता राग के शुद्ध विकृत स्वर निश्चित करने के लिए नहीं हैं। परन्तु षड्ज की हेर–फेर संगीत में भी कहीं –कहीं प्रचार में दिखायी देती है। कुछ कुश्ल गायक–वादक राग गाते बजाते समय बीच–बीच में ऐसे चमत्कार करके दिखाते हैं।

उदारहणार्थ – कोई गायक भैरवी गा रहा है। गाते –गाते भैरवी से राग का केन्द्र बदल कर कोमल ऋषभ से तार सप्तक के कोमल ऋषभ तक भैरव के ही सुरों में आलाप करना शुद्ध कर दिया या कहिये कि भैरवी के ऋषभ की मूर्च्छना में ही आलाप करना शुद्ध कर दिया। परिणाम यह हुआ कि भैरवी के सुर तम्बरे के हिसाब से होते हुए भी वह यमन के स्वर सुनाई देने लगे।

इस प्रकार बहुत से रागों में यह चमत्कार दिखलायी पड़ सकता है भैरवी के ऋषभ की मूर्च्छना पर जैसे यमन सुनायी पड़ता है उसी प्रकार यमन के निषाद की मूर्च्छना से भैरवी सुनाई दे सकती है। जयजवंती में ऋषभ तो वादी स्वर ही है। उस पर बार–बार अवरोही आलाप समाप्त कर दें तो भैरवी की छाया उत्पन्न होती है।

मात्र षड्ज बदलने से एक थाट या एक राग से दूसरे थाट या दूसरे राग का आभास उत्पन्न होता है। एक राग में ही दूसरे राग की भांति उत्पन्न होती है।

कुछ लोगों का अनुमान है कि प्रचलित रागों में से कुछ राग संभवतः इसी प्रकार षड्ज का परिवर्तन करके बनाए गए होंगे।

2.5 SUM UP.

After going through this lesson, pupils came to know how the present form of Indian classical Music was linked with 'GRAM' and 'MOORCHHNA' the ancient form of Indian classical Music.

2.6 EAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. What do you know about the 'Gram'? How many Grams were in practice in Ancient period ?
2. Write in detail about Gram and Moorchana.
3. Do you think that in modern time the concept of Moorchana still prevails if so, throw light on it.
4. How many Moorchanas can be obtained from Shadja and Madyam Gram?

2.7 BOOKS CONSULTED

1. Sangeet Visharad by Vasant
2. Bhartiya Sangeet Ek Etihasit Vishlashan by Swatantra Sharma
3. Raag Parichay by Harsh Chander Srivastava.

*****

3.0 Detailed study of Dakshini Tal Padhitti

3.1 Introduction.

3.2 Objectives.

3.3 Dakshini Tal Padhitti

3.3.1 Main Taals and their Jaties

3.4 Sum up.

3.5 Examination Oriented Questions.

3.6 Books Consulted

3.1 INTRODUCTION

In this topic, the students will study the traditional taal system which is previlent in Karnataki Music, which is one of the most essential factor of Music. They will come to know about the 7 main taals and the 35 further taals, on which the whole structure of Karnataki music is established.

3.2 OBJECTIVES

1. The Studentsh will know the basic 7 taals.
2. They will learn about the 35 taals which are formed from the 7 taals.
3. They will come to learn the technique to form the 35 taals by merely changing the matras of "laghu".
4. They learn how to convert the Taals of Hindustani classical sangeet into Dakshini taal padhitti.

3.3 DAKSHINI TAL PADHITTI

दक्षिणी ताल पद्धति उत्तरी संगीत की ताल पद्धति में पूर्णतया भिन्न है। हिन्दुस्तानी संगीत में तालों की संख्या सीमित नहीं है तथा मात्राओं का विभागों के अनुसार तालों की रचना हुई है। लेकिन दक्षिणी ताल पद्धति इससे बिल्कुल भिन्न है।

दक्षिणी ताल पद्धति में कुल 7 मुख्य ताल माने गये है जिनके नाम इस प्रकार है–

1. ध्रुव 2. मठ 3 रूपक 4. झप 5. त्रिपुट 6. अठ 7. एकताल

प्रत्येक ताल की पांच –पांच जातियां मानी गई है जो इस प्रकार है –

1. चतस्त जाति 2. त्रिस्त्र जाति 3. मिश्र जाति

4. खण्ड जाति 5. संकीर्ण जाति

इस पद्धति में तालों को लिखने के लिए छ चिन्ह् नियम किए गये है। जिनकी सहायता से इन तालों को लिखा जाता है। वे छः चिन्ह इस प्रकार है।

1. अणद्रुत		मात्रा एक
2. द्रुत	0	मात्राएं दो
3. लघु	1	मात्राएं चार
4. गुरु		मात्राएं आठ
5. प्लूत	3	मात्राएं बारह
6. काकपद	x	मात्राएं सोलह

छः चिन्हों में 'लघु' नामक चिन्ह विशेष महत्वपूर्ण है और इसी एक चिन्ह के कारण तालों की विभिन्न जातियां बनती है। 'लघु' चिन्ह की मात्राएं तो चार मानी गई है। लेकिन इसकी मात्राएं परिवर्तित होती रहती है।

चतस्त्र जाति में लघु की मात्रा – 4

त्रिस्त्र जाति में लघु की मात्रा – 3

खण्ड जाति में लघु की मात्रा – 5

मिश्र जाति में लघु की मात्रा – 7

संकीर्ण जाति में लघु की मात्रा – 9

मुख्य ताल और उनकी जातियां –

			चतस्त्र जाति	त्रिस्त्र जाति	खंड जाति	मिश्र जाति	संकीर्ण जाति
1	ध्रुवताल	1011	4244	3233	5255	7277	9299
2.	मठताल	101	424	323	525	727	929
3.	रूपक ताल	10	42	32	52	72	92
4.	झपताल	1–0	412	312	512	712	912
5.	त्रिपुट	100	422	322	522	722	922
6.	अठताल	1100	4422	3322	5522	7722	9922
7.	एक ताल	1	4	3	5	7	9

इस प्रकार कुल मिलाकर इस पद्धति में 35 ताल माने जाते है। ताल में जितने चिन्ह होते है उतने ही विभाग माने जाते है। ताल का सम हमेशा पहली मात्रा पर ही पड़ता है। खाली का अलग विभाग नहीं होता । इस पद्धति में ताल के लिए मुख्य तीन क्रियाएं की जाती ह।

1. घात करना – हाथ में ताली देना पड़ती है अधिकतर सम पर घात करते है।

2. अंगुली गिनन – ताली दा खाली देने के बाद मात्राओं को अंगूली से गिना जाता है। अंगुलियों के गिनने के लिए अधिकतर कनिष्ठका से शुरू करते हैं।

3. विसर्जितम् – इसका प्रयोग घात के बाद मात्राओं को गिनने के लिए किया जाता है। इसके तीन भेद माने जाते है।

1. पतांक विसर्जितम् – हाथ के ऊपर उठाकर मात्राएं गिनना।

2. कृषय विसर्जितम् – हाथ को बाई ओर हिलाकर मात्राएं गिनना

3. सर्पिणी विसर्जितम् – हाथ को दाई ओर हिलाकर मात्राएं गिनना।

3.4 SUM UP.

This will help the students to boost their confidence in taal and laya and concept of Rhytem will be efirmed., This fact will become more clear and explicit that the taaal system of the Karnataka Music is proficient towards exactitude.

3.5 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. Explain Karnataki Taal Padditi.

2. Importance of Taal in Karnataki Sangeet. Explain.

3. How many basic taals and Jaaties are there in Karnataki Music. Enlist them?

4. According to Jatis, the number of which sign or symbol is changed to create a new taal?

5. Do you feel that there exists an association between the north Indian and South Indian Taal Padditi?If yes Discuss in detail.

3.6 REFERENCES/BOOKS CONSULTED.

1. Sangeet Ratnawali Ashok Kumar Yama

2. Sangeet Visharad by Basant

3. Sangeet Bodh

4. Raag Parichay µ Prof. Harish Chander Srivastava.

******

Course No. MU-401 **Section-B**

Semester - IV **Lesson-4**

HISTORY OF INDIAN MUSIC DURING MEDEIVAL PERIOD

4.1 Introduction

4.2 Objective

4-3. संगीत की उत्पत्ति

4.3.1 पूर्व मध्यकाल

4.3.2 संगीत मकरन्द

4.3.3 गीत गोविन्द

4.3.4 संगीत रत्नाकर

4.4. उत्तर मध्यकाल

4.4.1 अलाउद्दीन

4.4.2 राग तरंगिणी

4.4.3 कल्लिनाथ

4.4.4 अकबर

4.4.5 जहाँगीर

4.4.6 शाहजहाँ

4.4.7 संगीत परिजात

4.4.8 औरंगजेब

4.4.9 चतुर्दन्डिप्रकाशिका

4.4.10 भावभट्ट

4.4.11 मोहम्मद शाह रंगीले

4.5 Conclusion

4.6 Examination Oriented Questions.

4.7 References/ Books consulted

4.1 INTRODUCTION

Indian music has come across a lot of changes from ancient to modern times. In this chapter we will know about development and historical facts based on old granthas which lead us to know the shape and facts related to music in medevial period with reference from granthas of medevial period .

In this chapter we will know about all the details and facts of music in vedic kaal, sandigda kaal and bharata kaal.

4.2 OBJECTIVE

There are many beliefs related to the evolution and history of music but for a student its important to have evidence based on facts, which may lead to any logical conclusion.The main objective of knowing the history of music is to make students aware about the logical facts of evolution of music and historical facts related to its development in different eras.

4.3 संगीत की उत्पत्ति

संगीत की उत्पत्ति कब, कैसे और किसके द्वारा हुई, विद्वानों के अनेक मत है। वास्तव में संगीत का इतिहास स्वयं मानव का इतिहास है। जैसे–जैसे मानव का आध्यात्मिक विकास होता गया, संगीत की भी उन्नति होती गई।

संगीत की उत्पत्ति के विषय में अनेक किवंदतियाँ भी प्रचलित है, जिनमें संगीत की उत्पत्ति देवी–देवताओं के द्वारा बताई गई है। मुख्य किवदन्तियाँ लगभग सात हैं, किन्तु उनमें पारस्परिक विरोध दिखाई पड़ता है। अतः उनका आश्रय लेना तर्कसंगत नहीं है।

संगीत के संपूर्ण इतिहास काल से आज तक के समय को तीन भागों में विभाजित किया गया है :–

1 प्राचीन काल – आदि काल से 800ई॰ तक।

2 मध्य काल – 800 ई॰ से 1800ई॰ तक।

3 आधुनिक काल – 1800 ई॰ से आज तक।

यहाँ हम मध्य काल के संगीत पर प्रकाश डाल रहे हैं। मध्य काल को पुनः दो भागों में विभक्त किया जा सकता हैः–

1 पूर्व मध्यकाल

2 उत्तर मध्यकाल

4.3.1 पूर्व मध्यकाल –

यह काल 8वीं शताब्दी से 13वीं शताब्दी तक माना जाता है, इस काल की शारङ्गदेव कृत्य 'संगीत रत्नाकर' और पंडित जयदेव कृत 'गीत गोविन्द' से यह ज्ञात होता है कि उस समय प्रबन्ध गायन प्रचलित था, इसलिए इस काल को प्रबन्ध काल भी कहते हैं, 9वीं शताब्दी से 11वीं शताब्दी तक भारत में संगीत की अच्छी उन्नति हुई, 11वी शताब्दी से मुसलमानों का आक्रमण आरम्भ हुआ और लगभग 12वीं शताब्दी तक वे भारत के शासक हो गए। उनकी सभ्यता संस्कृति और संगीत का प्रभाव भारतीय संगीत पर पड़ा। अतः उत्तरी संगीत धीरे–धीरे दक्षिणी संगीत से पृथक् हो गया। इस काल में कई संगीत के ग्रन्थ प्राप्त हुए।

4.3.2 संगीत मकरन्द –

इस ग्रन्थ के रचयिता नारद हैं। इस ग्रन्थ में सर्वप्रथम स्त्री, पुरुष नपुंसक रागों का वर्णन मिला। महर्षि नारद ने कई ग्रन्थ लिखे। जैसे – नारदीय शिक्षा, नारदीय संहिता आदि। संगीत मकरन्द ग्रन्थ को विद्वानों नवीं शताब्दी में माना गया।

4.3.3 गीत गोविन्द –

इस काल में संगीत मकरन्द ग्रन्थ के बाद गीत गोविन्द की रचना हुई। यह ग्रन्थ 12वीं शताब्दी में जयदेव द्वारा लिखा गया। जयदेव कवि ही नहीं गायक भी थे। इसें स्वरलिपि सहित संस्कृत में लिखे गए प्रबन्ध और गीतों का संग्रह है।

4.3.4 संगीत रत्नाकर –

शारङ्गदेव द्वारा रचित 'संगीत रत्नाकर' ग्रन्थ 13वीं शताब्दी में प्राप्त हुआ। इसे दक्षिणी संगीत का भी आधार ग्रन्थ माना जाता है। शारङ्गदेव ने (1) संवादी स्वर का अन्तर 8 अथवा 12 श्रुतियों का माना है, जबकि उनके पूर्व भरत, दत्तिल और मतंग ने 9 अथवा 13वीं श्रुतियों का अन्तर माना है। भरत के समान 18

जातियाँ मानी गई हैं। जाति के 13 लक्षण और समस्त रागों को दस भागों में बाँटा गया है, जिसे 'दस विधि राग वर्गीकरण' कहा गया। जातियों से ग्राम राग और ग्राम राम से राग और उपराग उत्पन्न माने गए हैं। ग्राम रागों की संख्या 30 मानी गयी। यह संगीत का अति महत्वपूर्ण ग्रन्थ माना गया है।

4.4. उत्तर मध्यकाल –

इस काल का प्रारम्भ 13वीं शताब्दी के बाद में 18वी शताब्दी तक माना जाता है। इस काल में फारस और उत्तर भारतीय संगीत का मिश्रित रूप भलीभाँति विकसित हुआ। अतः इसे विकास काल भी कहा जाने लगा। अधिकांश मुसलमान राजाओं को संगीत से प्रेम था। अतः उन लोगों ने अपने दरबार में संगीतज्ञों को आश्रय दिया।

4.4.1 अलाउद्दीन –

(1296 से 1316 तक) के शासनकाल में अमीर खुसरो नामक संगीत विद्वान हुए। कहा जाता है कि उन्होंने वाद्यों में तबला और सितार, रागों में राजगिरि, सरपरदा, जिलफ आदि गीत के प्रकारों में छोटा ख्याल और तराना तथा तालों में झमूरा, सूल आड़ा चारताल आदि का आविष्कार किया। उनकी गायन प्रतियोगिता दक्षिण के संगीतज्ञ गोपाल नायक से हुई। छल–कपट से इन्होंने गोपाल नायक को हराया (ऐसा कहा गया है)।

4.4.2 राग तरंगिणी –

इस काल की सर्वप्रथम प्रस्तुत पुस्तक लोचनकृत राग–तरंगिणी है। इसकी रचना काल 15वीं शताब्दी का पूर्वाद्ध माना जाता है। इसके अनुसार शुद्ध थाट काफी है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि सम्पूर्ण रागों को कुल 12 थाटों अथवा मेलों में विभाजित किया गया। आधुनिक थाट राग वर्गीकरण का बीजारोपण राग तरंगिणी द्वारा हुआ, ऐसा लोगों का विचार है।

4.4.3 कल्लिनाथ –

एक प्रसिद्ध संगीतज्ञ था। राग वर्गीकरण का एक मत इन्हीं के नाम पर आधारित है। उनके समय में भक्ति आन्दोलन चल पड़ा जिससे भजन–कीर्तन द्वारा संगीत का खूब प्रचार हुआ।

4.4.4 अकबर

(1556–1604) – अकबर के शासनकाल में संगीत की बहुत उन्नति हुई। अकबर स्वयं बड़ा संगीत प्रेमी था। उन्होंने अकबरी के अनुसार उसके दरवार में छत्तीस संगीतज्ञ थे, जैसे नायक बैजू, ताल–तरंग, गोपाल तानसेन आदि। इनमें तानसेन मुख्य थे। तानसेन की वंश और शिष्य परम्परा सैनी घराना कहलायी। तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई आदि भक्त कवियों और कवित्रियों के द्वारा जनता में संगीत का प्रचार बढ़ा।

4.4.5 जहाँगीर

(1605–1627) – जहाँगीर के दरबार में भी कई संगीतज्ञ थे। सन् 1620 में दक्षिण के पंडित सोमनाथ ने राग विबोध पुस्तक लिखी। सन् 1625 में पंडित दामोदर मिश्र ने 'संगीत दर्पण' ग्रन्थ लिखा।

4.4.6 शाहजहाँ

(1627 – 1657) – शाहजहाँ के दरबारी संगीतज्ञों के नाम निम्नलिखित हैं – दिरंग खाँ, ताल खाँ और तानसेन के दामाद विलास खाँ और तानसेन के पुत्र लाल खाँ।

4.4.7 संगीत परिजात –

संगीत परिजात ग्रन्थ 1650 ई. में पंडित अहोबल द्वारा लिखा गया और दीनानाथ ने बाद में इसका अनुवाद किया। (क) पंडित अहोबल ने 7 शुद्ध स्वरों के साथ–साथ 22 विकृत स्वरों के नाम तो दिए हैं, किन्तु राग अध्याय में केवल 12 स्वर प्रयोग किए हैं, उन्होंने कुछ स्वरों के लिए एक से अधिक नाम प्रयोग किए हैं। (ख) इस ग्रन्थ में पहली बार वीणा के तार पर 12 स्वरों की स्थापना का प्रयास किया गया है। (ग) संगीत परिजात का शुद्ध सप्तक उत्तर भारत के काफी और दक्षिण भारत के खरहरप्रिया थाट के समान है।

4.4.8 औरंगजेब

(1657–1670) – औरंगजेब संगीत का कट्टर विरोधी था। जिन लोगों ने सम्राट के भय से संगीत छोड़ दिया, उन्हें राज्य की ओर से पेंशन दी गई। इस काल में संगीत के कुछ ग्रन्थों की रचना हुई, जो इस प्रकार हैं–

4.4.9 चतुर्दन्डिप्रकाशिका –

यह 1660 ई. दक्षिण के संगीतज्ञ व्यंकटमखी द्वारा लिखा गया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि उस समय के सप्तक से अधिक–से–अधिक 72 थाटों की रचना हो सकती है तथा एक थाट से कुल 484 राग उत्पन्न हो सकते हैं।

4.4.10 भावभट्ट –

तीन ग्रन्थ लिखे – अनूप संगीत रत्नाकर, अनूप और बिलास तथा अनुपांकुश।

4.4.11 मोहम्मद शाह रंगीले

(1719 – 1748) – यह संगीत का बड़ा प्रेमी था। उनके दरबार में सदारंग और अदारंग दो प्रमुख गायक थे, जिनके ख्याल आज भी प्रचुरता से प्रचलित हैं। लगभग इसी समय शोरी मियाँ ने टप्पे का आविष्कार किया। 18वीं शताब्दी के उत्तर्रार्द्ध में मुसलमानों का राज्य धीरे–धीरे समाप्त होने लगा और अंग्रेजों का प्रभुत्व बढ़ने लगा। केवल रियासतों को संगीत की साधना चलती रही।

4.5 CONCLUSION

उपरोक्त तथ्यो के आधार पर हम कह सकते है कि संगीत का जो क्रमिक विकास प्राचीन काल से आधुनिक काल तक हुआ उस काल में संगीत मकरन्द गीत गोविन्द संगीत रत्नाकर राग तरंगिणी संगीत परिजात चतुर्दन्डिप्रकाशिका आदि ग्रंथों को आधार मानते हुए बहुत महतवपूर्ण उपलब्दिया हुई तथा कई गायन षैलियों का विकास हुआ तथा आज भी निरंतर जारी है।

4.6 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. Write in detail about the development of music during the poorva –madhya kaal .
2. Write in detail about the development of music during the uttar –madhya kaal .
3. What was the contribution of granthas in the medevial period in the development of music.

4.7 REFERENCES/ BOOKS CONSULTED

1. संगीत मकरन्द
2. गीत गोविन्द
3. संगीत रत्नाकर
4. . राग तरंगिणी
5.. संगीत परिजात
6. चतुर्दन्डिप्रकाशिका

******

Course No. MU-401 **Section-B**

Semester - IV **Lesson-5**

5.0 Origin of Bhatkhandey notation system, its development, Merits & demerits

5.1 Introduction

5.2 Objective

5.3 Origin of notation system

5.4 V. D. Palusker notation system

5.5. Bhatkhandey notation system

5.6 Merits & demerits

5.7 Conclusion

5.8 Examination Oriented Questions.

5.1 INTRODUCTION

The notation system in music means a text form of musical notaiotions which indicate the swaras, bolas and their division according to their taal. Notation system in music is an outcome of hardwork of many many musicians who developed a system so that the music bandishs inherited from old generations is presereved for the future generation. In Indian music tradition the credit for the notaion system goes to Pt. V.D Paluskar and Pt.V.N Bhatkhandey, who collected and compiled all traditional and centuries old bandishas of different musicians and gave them a text form and made it available for the generations to come. There are two main notation systems prevelant in India, but In north India musicans follow Pt V.N Bhatkhandey notation system.

5.2 OBJECTIVE

The main objective for understanding the notation system is to know about

the pattern and symbols used for signifieng the swaras, bols af bandish and taal and also the symbols used for indicating meend, kann swaras, layakari and other aspects of bandish in written form and preserving the bandish or a composition in a text form.

5.3 ORIGIN OF NOTATIONS SYSTEM , ITS DEVELOPMENT MERITS AND DEMERITS.

किसी गाने की कविता अथवा साजों पर बजाने की गत को स्वर और ताल के साथ जब लिखा जाता है तब उसे स्वरलिपि (Notation) कहते है। प्राचीनकाल में भारत में लगभग 350 ई0 पूव अर्थात पाणिनी के समय के पहले ही स्वरलिपि –पद्वति विद्यमान थी , किन्तु तब यह स्वरलिपि पद्वति अपने शैशव काल में ही थी। उस समय तीव्र तथा कोमल स्वरों के भेद तथा ताल सहित स्वरलिपि नहीं होती थी, अपितु केवल स्वरों के नाम उनकें प्रथ्सम अक्षरों के साथ सरगम के रुप में दिए जाते थें। उनके केवल इतना ही बोध होता था कि अमुक गायन में अमुक स्वर प्रयुक्त हुए है।

तीव्र कोमल स्वरों के चिन्ह न होने के कारण एवं ताल , मात्रा , मीड आदि के अभाव में उन स्वर लिपियों से संगीत विद्याथी लाभ उठाने में असमर्थ रहे। प्राचीन समय में स्वरलिपि पद्वति का विकास न होने के और भी कुछ कारण थे, उदाहरणार्थः–

1 उस समय संगीत कला विशेषयतथ कियात्मक (Practical) रूप में थी अर्थात् गुरु मुख से सुनकर ही विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण किया करते थे।

2. लेखक प्रणाली एवं मुद्रण– समबन्धी सुविधाएं उस समय आजकल जैसी न थी।

3. रागों को जबानी (मौखिक) याद रखा जाता था।

4. प्राचीन समय के उस्ताद अपनी कला को केवल अपने पुत्र अथवा विश्वसनीय शिष्यों को भी लिखकर नहीं बताते थें , बल्कि सीना–ब–सीना (सामने बैठकर) ही सिखाना पसन्द करते थे।

5. संगीतकला गुरु से शिष्य को और शिष्य से उसके शिष्य को सिखानें या कंठस्थ कराने की प्रथा थी। विद्यार्थियों के लिए सुबोध और सरल स्वरलिपि का निर्माण आज से 50–60 वर्ष पूर्व हुआ जिसका श्रेय भारतीय संगीत की दो महान विभूतियों (1) पं0 विष्णु नारायण भातखंड़े और (2) पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर को हैं

इनके द्वारा निर्मित स्वरलिपियों का प्रचार शनैःशनै समस्त भारत में होता गया। बीच –बीच में अन्य कोई संगीत पंडितों ने भी अपनी–अपनी पृथक स्वरलिपि पद्वतियाँ चालू की, किन्तु वे व्यापक रुप से प्रचार में न आ सकी आज उक्त दोनों पद्वतियां ही लोकप्रिय होकर प्रचार में आ रही है।

यद्यपि इन स्वरलिपि से गायक के गले की सभी विशेषताएं लिपिबद्व करना सम्भव नहीं हो सका हैं, उदाहरणार्थ भारतीय संगीत की विशेषताएं गमक, गिटकरी , राग सौन्दर्य , अंलकार , श्रति प्रयोग , स्वर –माधुर्य आदि वारीकियाँ स्वरलिपि द्वारा व्यक्त नहीं की जा सकती । फिर भी वर्तमान स्वरलिपि पद्वतियों से संगीत विद्याथियों को जो सहायता मिली है और मिल रही हैं उसे भुलाना नहीं जा सकता।

श्री भातखंडे ने पुराने घरानेदार उस्तादों के गायनों की स्वरलिपियाँ तैयार करने में बहुत ही परिश्रम किया था। उन्होनें समस्त भारत का भ्रमण करके , उस्तादों की सेवा तथा खुशामद करके स्वरलिपियां तैयार की। उस समय कुछ ऐसे भी उस्ताद थे जो अपने गाने की स्वरलिपि किसी भी प्रकार दूसरे व्यक्ति को बनाने की आज्ञा नहीं देते थें। श्री भतखड़ें ने बड़ी युक्ति और कौशल से परदों के पीछे छिप–छिपकर उनका गायन सुना और स्वरलिपियां तैयार की, एवं बहुत सी स्वरलिपिया ग्रामोफोनरिकाडों द्वारा भी तैयार की। इस प्रकार कई हजार चीजों की स्वरलिपियों तैयार कर के उन्हे कमिक पुस्तक मालिका ' नाम से छह भागों में प्रकाशित कराकर संगीत विद्यार्थियों का मार्ग प्रशस्त कर दिया । इसी प्रकार पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर ने भी कई पुस्तके तैयार की। पुलस्कर जी की स्वरलिपि पद्वदि जो प्रारम्भ में उनके द्वारा चालू हुई थी, अब उसमें कुछ परिवर्तन हो गेए है। यही कारण है कि विष्णदिगम्बर जी की प्रारम्भिक मूल पुस्तको में तथा आज उनके विद्यालयों में चलने वाली 'रागविज्ञान' आदि पुस्तका के चिन्हों में काफी अन्तर पाया जाता है। तथपि वर्तमान स्वरलिपि प्रणाली उनकी प्राचीन प्रणली से अधिक सुविधाजनक है। यही कारण है कि यह परिमाजित स्वरलिपि पद्वति विशेष रुप से प्रचार में आ रही है विष्णु दिगम्बर जी की स्वरलिपि पद्वति जो आजकल प्रचार में आ रही है इस प्रकार है

5.4 विष्णु दिगम्बर पद्वति के स्वरलिपि –चिन्ह

1. जिन स्वरों के ऊपर चीने कोई चिन्ह नहीं होता वे मध्य सतक के शुद्व स्वर यमझे जाते है जैसे रे ग म प।
2. जिन स्वरो के नीचे हलन्त का निशान होता है, उन्हे कोमल श विकृत स्वर मानते हैं, जैसे रि् ग् ध् नि्।
3. तीव्र या विकृत मध्यम को उल्टे हलन्त द्वारा इस प्रकार दिखाते हैं– म्।
4. उपर बिन्दीवाले स्वर मन्द्र सप्तक के माने जाते है, जैसे –पं धं निं
5. जिन स्वरों के उपर खड़ी लकीर होती है , वे तार सप्तक के स्वर होते हैं, जेसै –स रे गं म।
6. स्वर पर मात्राओं के लिए इस प्रकार चिन्ह रखे है :–

+	चार मात्रा जैसे सा
–	दो मात्रा जैसे सा
–1	मात्रा , जैसे सा
0	आधी मात्रा जैसे सा

1/4 मात्रा , जैसे प

1/8 मात्रा जैसे म

7. उच्चारण के लिए अवग्रह च्निह (ऽ) का प्रयोग करते है और गीत के अक्षरों के ठहराप को लम्बा करने के लिए विन्दु (.) का प्रयोग करते है

जैसे ग प

रा.... म

8. स्वरों के चीने या इत्यादि लिखा हो, तो वहां 1 मात्रा में 3 या 6 स्वर बोले जाते है।

9. किसी स्वर के उपर कोई दूसरा स्वर लिखा हो तो कण स्वर के रुप में प्रयुक्त करते है।

10 ताल में सम के लिए 1 चिन्ह लगाने है, खाली के लिए चिन्ह का प्रयोग होता हैं, अन्य तालियो के लिए कमश : उन गिनतियों पर ताल लगानी होती है।

5.5 भातखडत्रे –पद्वति के स्वरलिपि चिन्ह।

1. जिन स्वरो के नीचे डपर कोई चिन्ह , नही होता उन्हे शुद्व स्वर मानते हैं, जैसे –सा रे ग म।

2. जिन स्वरों के चीने आड़ी रेखा खीच दी गेई हो, उन्हे कोमल स्वर कहते है, जैसे –रे ग ध नि।

3. तीव्र मध्यम की पहचान के लिए म के उपर एक खड़ी लकीर खीच दी जाती है, जैसे मं।

4. चीने विन्धु वाले स्वर मन्द्र सप्तक के माने जाते है जैसे –म़ प़ ध़।

5. उपर बिन्धु वाले स्वर तार सप्तक के माने जाते हैं, – गं रें सां।

6. बिना बिन्दु वाले स्वर मध्य सप्तक के समझने चाहिए , जैस –प म ग।

7 गाने के जिस शब्द के आगे जितने अवग्रह चिन्ह (ऽ) हो, उस शब्द को उतनी ही मात्रा वढ़ाकर गाने हैं, जैसे –रया ऽ ऽ म।

8. जिन स्वर के आगे जितनी पड़ी लकीरे (–) हो , उस स्वर को उतनी ही मात्रा वढ़ाकर गाते हैं, जैसे ग– –।

9 केई स्वरों को एक मात्रा में गाने बजाने के लिए ◡ इस चिन्ह का प्रयोग होता है जैसे पमग अथवा रेगमप।

10 स्वर के ⌒ उपर इस प्रकार के चिन्ह को मीड कहते है जैसे – म प ध नि अर्थात यहां पर मध्यम से निवाद तक मीड़ ली जाएगी ।

11. किसी स्वर के ऊपर कोई स्वर दिया हो,तो उसे कण स्वर समझना चाहिए जैसे ग ''प अर्थपत ग का जरा छूते हुए प स्वर को गाना या बजाना है।

12. जो स्वर कोठक में बन्द हो, उसे इस प्रकार गाना चाहिए– पहले उनके बाद का स्वर , फिर वह स्वर जो कोष्ठक बन्द हैं, फिर उसके पहले का स्वर तथा फिर वही कोष्ठकवाला स्वर अर्थात एक मात्रा में चार स्वर गाए जाएगें जैसे–(प) = ध पम प।

13. ताल में सम दिखाने का यह चिन्ह होत है। +

14. खाली के लिए शून्य के चिन्ह का प्रयोग होता है। 0

15 सम को पहली ताली मानकर अन्य तालियों के लिए क्रमश : 2–3–4 आदि संख्याएँ लगाते है।

5.6 नोटेशन पद्वति की अच्छाईयां और बुराइयां।

अच्छाईया

1. स्वर लिपि की सबसे बड़ी उपयोगिता है कि इससे गुरुमुख से सीखा हुई वस्तु को याद करने में सहायता मिलती है। इसकी सहायता से बरसों पहले सीखी हुई वस्तु भी पुन स्वर लिपि देखने से स्मरण आ जाती है।

2. अमुक राग किस काल में और किस प्रकार गाया जाता है। इसका बोध अगली पीढ़ी को कराने के लिए नोटेशन ही एक ऐसा साधन है जो इन सबका रिकाड रखता है।

3. व्याकरण की दुष्टि से नोटेशन पढ़कर प्रत्येक व्यक्ति अपनी शक्तिनुसार बुद्विनुसार गा– बजा सकते है। जैसे भाषाएं सीखनें के लिए भाषा की लिपि सीखनी आवश्यक है। उसी प्रकार संगीत के लिए भी स्वर लिपि आवश्यक है।

4. स्वर लिपि ध्येय तो नहीं ध्येय की प्राप्ति का एक सरल साधन है। जीत की रुपरेखा का स्पष्ट और शुद्व रुप से वर्णन कर देने के बाद उसका कार्य सताप्त हो जाता है। स्वर लिपि का सरल और स्पष्ट होना ही अधिक सर्वमान्य होगा क्योकि सरलता और स्वाभाविकता के कारण ही अल्प ज्ञानी और विद्वान दोनो लाभ उठा सकते है।

5. स्वर लिपि पद्वति से ही हमें पुराने घरानेदार गायको की चीने मिल सकती है। जैसे –प0 भातखंडे ने कमिक पुस्तक मलिका के भागों में यह घरानेदार चीजे लिखी है।

6. किसी गायक अथवा वादक की शैली स्वर लिपि की सहायता से ही लिखकर सुरक्षित रखी जा सकती है।

7. ऐसे गायक वादक जो अपनी चीजें अपने शिष्यों के अतिरिक्त किसी अन्य को नहीं सिखाते उनकी चीजें भी उन्हे कहीं भी सुनकर स्वरलिपि वद्व करके सीखी व रखी जा सकती है।

8. स्वर लिपि पद्वति की सहायता से दूसरे देशो में भी हमारे संगीत का प्रचार हो सकता है।

9. किसी अच्छे गायक की संगीत की देन स्वर लिपि द्वारा ही सुरक्षित रखी जा सकती है।

बुराईयाँः–

1. इससे हमारे संगीत के क्रियात्मक रुप को नुक्सान पहुचाँ है। स्वरलिपि पद्वति गायक के गले की सभी विशेषताएं जैसे गमक, गिटकरी श्रुति प्रयोग स्वर का लगाव इत्यादि बातों को लिपि बद्व करने में असमर्थ है अपितु यह चीजे गुरु मुख से सुनकर ही आ सकती है। परन्तु आज का संगीत वर्ग शिक्षकों के पास जाने की अपेक्षा किताबों से पढ़कर सीखना अशिक पसंद करने लगा है जिसके परिणाम स्वरुप रागो के रुप ही बदल गये है और वैसे भी उनके संगीत में आकर्षण स्वाभविकता रस की कमी है।

2. मूल गायकी के स्वर लगाने की शैली उच्चारण का ढ़ग विश्रान्ति का समय स्वरों में परस्तर सम्बन्ध ध्वनि की कोमलता या जोर से उच्चारण करना आदि ये सब बाते स्वर लिपि में नहीं दिखाई जा सकती अतः जो स्वर लिपि को ही पूर्ण समझ कर उस पर निर्भर करते है। वे संगीत कला की वास्तविकता से परे चले जाते है।

3. वक्रतम स्वरों का प्रयोग स्वर उच्चारण राग– चलन इन सब बातों को सुनकर ही जानी जा सकती है।

4. राग सौन्दर्य आदि संगीत की विशेषतायों को पुस्तकों का कोरा अध्ययन नहीं सिखा सकता। अतः स्पष्ट है कि संगीत का वास्तविक ज्ञान तो संगीत गुरु से ही मिल सकता है। न कि स्वर लिपि पद्वति से।

5. एक ही स्वर लिपि होने से देश में कार्य अच्छी प्रकार चल सकता है पर यहां हर तीसरा व्यक्ति नई स्वर लिपि बना कर उसके अनुरुप चलने का प्रयत्न करता है केई पाश्चात्व स्वर लिपि की नकल करते है। जबकि वह पाश्चात्य संगीत से बहुत परे है।

5.7 CONCLUSION:-

भातखंडे स्वर लिपि पद्वति का उद्वेष्य रागों की परंपरागत बन्दिषों को लिपिबद्व कर उनहे संग्रहित कर भावी पीडी के लिए संरक्षित करना था। जिस समय में रिकार्डिंग का कोइ साधन नही था उस काल में यदि कोई तरीका था इनका संरक्षण करने का तो वह मोखिक रूप से ही होता था। आज जो रूप स्वर लिपि पद्वति का हमारे समक्ष है उस से आज की भावी पीडी लाभानवित हो रही है।

5.8 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS:-

1. What do you mean by Notation system? Write the detailed description of Bhat Khandey notution system.

2. Differenciate between V-N Bhat Khandey and V.D. Palusker notation system.

3. Throw light on the merits and demerits of Notation system

******

GHARANAS OF VOCAL AND INSTRUMENTAL(SITAR)

6-1 Introduction

6.2 Objective

6.3 घराना शब्द का अर्थ एवं परिभाषाएँ

6.3.1 घरानों का उद्‌भव

6.3.2 घरानों का विकास

6.3.3 घराने के नियम

6.4 दिल्ली घराना

6.4.1 दिल्ली घराने की विशेषताएँ

6.4.2 दिल्ली घराने से सम्बन्धित प्रमुख व्यक्तित्व

6.5 आगरा घराना

6.5.1 आगरा घराने की विशेषताएँ

6.6 ग्वालियर घराना

6.6.1 विशेषताएँ

6.7 किराना घराना

6.7.1 किराना घराने की विशेषताएँ

6.7.2 किराना घराने मुख्य तत्त्व

6.8 पटियाला घराना

6.8.1 पटियाला घराने की विशेषताएँ

6.9 तन्त्री वाद्य में घराने

6.10 भूमिका

6.11 सितार का सेनिया घराना

6.11.1 सेनिया घराने के वादन शैली की विशेषताएँ

6.11.2 सेनिया घराने के वादन शैली की विशेषताएँ

6.12 पूर्वी बाज

6.12.1 शैलीगत विशेषताएँ

6.13 रामपुर घराना (सितार)

6.14 घराना परम्परा के गुण एवं दोष

6.14.1 घराना परम्परा के गुण

6.14.2 घराना परम्परा के दोष

6.15 Conclusion

6.16 Examination Oriented Questions.

6.17 References/ Books consulted

6.1 INTRODUCTION

The word gharana comes from the Hindi word 'ghar' which is derived from Sanskrit for Griha, which means 'house'. It typically refers to the place where the musical ideology originated. The gharanas have distinct styles of presenting the khyal — how much to emphasize and how to enunciate the words of the composition, when to sing the sthayi and antara, whether to sing an unmetered alap in the beginning, what kinds of improvisations to use, how much importance to give to the rhythmic aspect, and so on. However, an individual performer from a gharana may choose to borrow appealing stylistic aspects of another

gharana in his or her gayaki some of the gharanas well known for singing khyals are: Agra, Gwalior, Indore, Jaipur, Kirana, and Patiala.

6.2 OBJECTIVE

Each and every gharana has a distinct identity and style of singing and playing instruments. Some gharanas lay imphasis on tonal quality (swar lagaaw), some on layakari. Some on rasa, some shudhata of raga. These are the main reasons of their different shalies/ styles which differentiate them from each other. In the modern times when we have a universalized music and new experiments being made to make music more innovative, its important for music listeners, singers and music students to understand the picular characteristics of these different gharans and adapt the good things from every gharanas.

6.3 घराना शब्द का अर्थ एवं परिभाषाएँ

'घराना' शब्द की उत्पत्ति 'घर' शब्द से मानी जाती है। जिस प्रकार एक घर में परिवार की शताब्दियों से चलती आ रही एक वंश परम्परा होती है, उनके नियम, कायदे, मर्यादाएँ व अनुशासन की सीमाएँ होती हैं, पारिवारिक परिवेश का एक विशेष स्वरूप होता है, उसी प्रकार सांगीतिक भाषा में घराने का तात्पर्य उस परम्परा से है, जो गुरु–शिष्य के रूप में अनेक पीढ़ियों तक चलती रहती है। प्रो. मधुबाला सक्सेना एवं राकेश बाला सक्सेना के अनुसारः–''शताब्दियों से चलती आ रही परम्परा, उच्चकोटि के गुरु व शिष्य, उनके व्यक्तिगत सम्बन्ध, स्नेह, श्रद्धा, विश्वास तथा अपनत्व की भावना, शैक्षणिक मर्यादाएँ, सीमाएँ तथा अनुशासन आदि सब मिलकर 'घराने' के अर्थ को स्पष्ट करते हैं।'' साधारण अर्थों में घराना शब्द का प्रयोग वंश–परम्परा अथवा शिष्य–परम्परा के रूप में किया जाता है, परन्तु गुरु–मुख से प्राप्त शिक्षा में अपना कुछ न कुछ मिलाकर उसका विकास करने को ही घराना माना जाता है।[2] श्री रमण लाल मेहता के अनुसार कलाओं में जब परिपक्वता आ जाती है, तो वही परिपक्वता विशिष्ट शैलियों को जन्म देती है। भारतीय संगीत में ऐसी ही शैलियों ने घराना या परम्परा का रूप प्राप्त किया है। प्रत्येक घराना किसी एक प्रभावशाली गुरु की आवाज की प्रकृति, विशिष्ट शैली अथवा विशिष्ट गुणों की अनुसरण परम्परा पर आधारित होता है।

बाबू भाई बैंकर के अनुसार :–''साधारण भाषा में 'घराना' शब्द के अनेक अर्थ हैं, जैसे–घर, कुटुम्ब, परिवार, वंश तथा परम्परा आदि। शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में घराना शब्द इन्हीं में से किसी एक या अनेक अर्थों के साथ सम्बन्धित प्रतीत होता है। कुछ विद्वानों ने घराना शब्द का अर्थ 'घर माना है।'' सुशील कुमार चौबे के अनुसार हम घरानेदार संगीत को 'टकसाली' संगीत भी कह सकते हैं। इनके अनुसार टकसाली संगीत का अर्थ सच्चा एवं प्रामाणिक संगीत है। घराने ऐसे वर्ग या सम्प्रदाय हैं, जिनके संस्थापकों ने अपनी मेहनत व लगन से साधना करके अपने कला–कौशल के बल पर प्रसिद्धि प्राप्त की। उन्होंने शास्त्रों पर आधारित संगीत के क्रियात्मक रूप में कुछ नए प्रयोग किए तथा उसे

अपनी मनोवृत्ति के अनुसार मधुर व आकर्षक बनाया। डॉ. जोगिन्द्र सिंह बावरा के अनुसारः–''जब कोई भी सुयोग्य कलाकार अपनी प्रतिभा तथा कठिन साधना से किसी एक विशेष शैली का निर्माण करता है, तो उसके शिष्यों द्वारा प्रचारित होती हुई वही शैली एक घराने को जन्म देती है।''

6.3.1 घरानों का उद्‌भव

प्राचीनकाल से ही हिन्दुस्तानी शिक्षा पद्धति गुरु–शिष्य परम्परा पर ही आधारित रही है। इसके अनुसार शिष्यों का एक विशिष्ट समूह गुरु से शिक्षा प्राप्त कर रहा होता है और शिक्षण की यही पद्धति एक परम्परा का रूप धारण करके सम्प्रदाय अथवा घराना परम्परा को जन्म देती है। भारतीय संगीत कला के प्राचीन गायकों में कुछ ऐसे प्रसिद्ध गायक हुए हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से एक विशेष प्रकार की गायन शैली को जन्म देकर उसे अपने पुत्रों तथा शिष्यों को सिखाकर प्रचलित किया है। इस प्रकार की गायन शैली को भी 'घराना' कहते हैं। जी. एन. ग़ोस्वामी के अनुसार :– 'घराना' शब्द का अर्थ है–एक विशेष स्थान पर प्रचलित अथवा व्यक्ति द्वारा प्रवर्तित संगीत की रीति, शैली या स्टाईल, जो किसी एक विशिष्टता द्वारा चिह्‌नित होती है। अतः घरानों के विकास के साथ–साथ ही भारतीय संगीत का विकास हुआ। घरानों ने संगीत को संरक्षित करके विकसित होते रहने देने का अवसर प्रदान किया है। डॉ. सुशील कुमार चौबे के अनुसार जिसे हम घराना कहते हैं, वह हिन्दुस्तानी संगीत की निराली विशेषता है। संसार का और कोई संगीत घरानों के अनुकूल अथवा उपयुक्त नहीं बना और न ही बन सकता।

राजपूत काल में भारत छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट चुका था। इसकी परस्पर फूट को देखते हुए यवनों ने भारत पर आक्रमण कर दिया और यहाँ पर यवनों का अधिकार हो गया। गुप्त काल में संगीत की धारा जो एक सूत्र के रूप में प्रवाहित हो रही थी, वह इस काल में विक्शित होकर छोटे–छोटे टुकड़ों में बिखर गई। परिणामस्वरूप भारतीय संगीत एवं संस्कृति अनेक छोटे–छोटे वर्गों में विभाजित हो गई तथा प्रत्येक वर्ग में संगीत एवं संस्कृति का विकास अलग–अलग रूप में होने लगा। इस समय के जितने भी कलाकार थे, लगभग सबको कहीं न कहीं राजाश्रय मिला हुआ था। इसका परिणाम यह हुआ कि इस युग के कलाकारों की संगीत एवं संस्कृति का ज्ञान राजाश्रय प्राप्त होने पर ही हो पाया। इसी कारण अलग–अलग परम्पराओं अथवा सम्प्रदायों की नींव पड़ी। प्रत्येक वर्ग प्रतिस्पर्धा की भावना के कारण एक–दूसरे से घृणा व ईर्ष्या करने लगा। एक कलाकार दूसरे कलाकार को नीचा दिखाने का अवसर ढूंढता रहता था। इसका परिणाम यह हुआ कि कला एवं संस्कृति का जो आदान–प्रदान पूर्ववर्ती काल में सम्पूर्ण देश के साथ–साथ दूसरे देशों में भी हो रहा था, वह पूर्ण रूप से अवरुद्ध हो गया। यह संकीर्णता यहाँ तक बढ़ गई कि संगीत के विद्वान् लोग अन्य जाति के लोगों को तो क्या, अपनी जाति एवं अपने वर्ग के लोगों को भी इसका ज्ञान देने में संकोच करने लगे। ये लोग अपनी संतान या कुछ विशिष्ट शिष्यों को ही इस कला का ज्ञान देते थे। भगवतशरण

शर्मा के अनुसारः–"जो लोग निःसंतान होते थे, उनकी कला उनके साथ ही समाप्त हो जाती थी।"[1] इन्हीं परम्पराओं, सम्प्रदायों, वर्ग भेद और संकीर्ण मनोवृतियों पर हमारे घरानों की नींव रखी गई।

ऐसा माना जाता है कि राजनैतिक परिस्थितियों, संगीतज्ञों में अशिक्षा, मूढ़ता, संकीर्णता व ईर्ष्या के कारण विकसित स्वार्थ की भावना के फलस्वरूप घरानों का जन्म हुआ। मध्यकालीन परिस्थितियों में संगीतज्ञों की दो श्रेणियाँ–'संगीतोपासक व संगीतजीवी' संगीतज्ञों के रूप में विकसित हुईं। संगीतोपासक संगीतज्ञों ने संगीत को केवल भगवद् वन्दना का माध्यम माना तथा संगीत के आध्यात्मिक पक्ष को ही प्रधानता दी, जबकि संगीतजीवियों ने राजदरबारों में रहकर संगीत को व्यवसाय के रूप में अपनाया और उसके मनोरंजनात्मक पक्ष को प्रधानता दी। आगे चलकर इसी वर्ग में घरानों का उदय हुआ हो तो आश्चर्य नहीं है। मुसलमानों ने हिन्दू साहित्य, संस्कृति व भाषा से अनभिज्ञ होने के कारण स्वर प्रधान गायिकी को ही प्रमुखता दी। उनके इस प्रयत्न में भिन्न–भिन्न स्वर प्रयोगों से ही विशेष गायकियों को प्रोत्साहन मिलने के परिणामस्वरूप ही घरानों का जन्म हुआ। बादशाहों को प्रसन्न करने के लिए तथा दरबारी प्रतियोगिताओं को जीतने के लिए बाध्य होने के कारण विभिन्न नए–नए चमत्कारिक स्वर प्रयोग के फलस्वरूप प्रस्तुतीकरण में भेद होना भी घरानों के जन्म का एक कारण प्रतीत होता है। कण्ठध्वनि के दोष या स्वाभाविक सीमाओं के कारण अपनी पहुँच में आने वाले गायन प्रकारों में विशिष्टता लाने के प्रयत्न से कुछ विशिष्ट रूप अथवा संस्कार उद्भुत हुए। कालान्तर में गुरु–शिष्य परम्परा से प्राप्त गायिकी को ही पूर्णरूपेण अपनाने के विश्वास के कारण ही घरानों के माध्यम से प्राचीन परम्परागत संस्कार अथवा गुण संरक्षित होने लगे।

वैज्ञानिक यन्त्रों का अभाव होने से सुनने व सुनाने का अवसर कम मिलने के कारण, संगीत का ज्ञान विस्तृत रूप से न होने तथा संकुचित घेरे में ही रहने के कारण एक ही प्रकार की गायिकी को मान्यता मिलने से एक गायिकी अथवा परम्परा दूसरी गायिकी अथवा परम्परा से भिन्न प्रतीत होने लगी। यातायात के साधनों के अभाव में एक स्थान पर एक गुरु के अनेक शिष्यों–प्रशिष्यों के वर्ग विकसित होने लगे, जो कालान्तर में घरानों के रूप में विकसित हुए। निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि गायकों की निर्बलता या उनकी कुछ विवशताएँ, संगीतज्ञों का संकुचित दशष्टिकोण, कुछ राजनैतिक व सामाजिक परिस्थितियाँ, प्रतियोगिताएँ जीतने के लिए बाध्य होना तथा बादशाहों को प्रसन्न करने के लिए गायिकी में सर्जनात्मकता आदि कारणों से घराने बने और विकसित हुए।[1] सही मायने में कोई परम्परा धीरे–धीरे अपने साकार रूप को प्राप्त करती है। इस संदर्भ में डॉ. सुशील कुमार चौबे का कहना है कि घरानों का जन्म अपने आप होता है। गायक और वादक उसे जान–बूझकर नहीं बनाते और न ही यह सोचकर बनाते कि वह अमुक नाम से पुकारे जाएंगे। अतः संगीत की प्रतिष्ठित शैलियों का विकास एवं प्रचार क्रमानुसार स्वाभाविक रूप में ही हुआ है।

6.3.2 घरानों का विकास

मध्यकाल में घरानों की जड़ें मजबूत हो गई थीं और गायन–वादन के अनेक घरानों का अपना एक विशिष्ट महत्त्व था। उस काल में घरानों की उपयोगिता इतनी बढ़ गई थी कि कलाकार की योग्यता उसके घराने के आधार पर ही आंकी जाती थी। गुरु ऐसे ही शिष्यों को शिक्षा के लिए चुनता था, जिनको वह योग्य समझता था, क्योंकि योग्य शिष्य ही कालान्तर में अच्छा कलाकार बनता है। इस प्रकार घरानों के आधार पर अनेक कलाकार महान कलाकार बन पाए। घरानों को विशिष्ट राज्य की ओर से धन आदि की सहायता प्रदान की जाती थी। घरानेदार कलाकारों को अपनी जीविकोपार्जन की चिन्ता नहीं रहती थी और वे अपनी साधना में बिना किसी व्यवधान के संलग्न हो सकते थे। घरानेदार पद्धति से शिक्षा ग्रहण करना प्रतिष्ठा का विषय माना जाता था। राजा या सम्राट संगीतज्ञों को अपने गुरु मानते थे। इसके कारण समाज, में संगीत और संगीतकारों की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। घराना परम्परा ने ही हमारी संगीत रूपी निधि को सम्भाल कर रखा है। घरानों का आधार चाहे कुछ भी रहा हो परन्तु निःसन्देह ही घराना परम्परा ने ही संगीत को सजाया, संवारा और उसको समाज में सम्मानित स्थान दिलाया।

घराना शब्द बीसवीं शताब्दी की देन है, तथापि वर्ग के रूप में इसका अस्तित्व सदा ही रहा है। मानव प्रारंभिक जीवन से लेकर आज तक वर्गों तथा घेरों में बंधा हुआ रहा है, जिसकी पृष्ठभूमि में कुछ सामाजिक व प्राकृतिक कारण है। अलग–अलग स्थान की जलवायु व वातावरण के अनुसार खान–पान, रहन–सहन व अन्य गतिविधियों की अनुकूलता तथा वस्तुओं की उपलब्धि के आधार पर विभिन्न प्रकार के वाद्य बनाए गए तथा प्रत्येक स्थान पर वहाँ के सामान्य जीवन के अनुकूल ही संगीत विकसित हुआ। यही संगीत अपने–अपने वर्गों में सीमित रहकर विकसित होता गया। जातियों के बाद प्रबन्ध गायन प्रचार में आया, इन सभी प्रबन्धों का गायन सभी कलाकार नहीं करते थे, अपितु अलग–अलग समुदाय अलग–अलग प्रकार से प्रबन्ध में कुशलता रखते थे। प्रबन्ध के पश्चात् ध्रुपद का अविर्भाव हुआ। ध्रुपद भी अलग–अलग ढंग से गाया जाने लगा और इसके मुख्यतः चार भेद हो गए–1. गोबरहार या गौड़हार वाणी 2. खंडार वाणी 3. डागुर वाणी तथा 4. नौहार वाणी। इस प्रकार के वर्ग इस बात का प्रतीक हैं कि शास्त्रीय नियम एक समान होते हुए भी स्वर व लय के विभिन्न प्रयोग, आवाज के लगाव, आलाप या तान की प्रधानता अथवा अलंकार, वर्ण आदि की प्रचुरता के आधार पर संगीतज्ञों के विभिन्न वर्ग बन जाते हैं, जिन्हें वर्ग, समुदाय, सम्प्रदाय, वाणी या घराना; किसी भी नाम से पुकारा जा सकता है।

ध्रुपद के पश्चात् जब ख़्याल प्रचार में आया तो इसमें भी वर्ग या घराने बन गए। इसका कारण यह था कि ख़्याल शैली में गायक को स्वर के विभिन्न प्रयोगों व संगीत अलंकरणों के विविध प्रयोगों की स्वतन्त्रता थी। यह प्रबन्ध या ध्रुपद की भाँति बहुत अधिक नियमों या बन्धनों से जकड़ा हुआ नहीं था। ख़्याल गायक को अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर भावों का प्रदर्शन, कण्ट–माधुर्य, कण्ठ–चातुर्य, चमत्कार व

वैचित्रय आदि से अपनी योग्यता अनुसार गायन में मधुरता, रंजकता व सांगीतिक सौन्दर्य निर्मित करने का पूर्ण अवसर मिलता है। इसलिए प्रत्येक गायक अपनी–अपनी योग्यता के अनुसार उनमें मधुरता, रंजकता व चमत्कारिकता लाने का प्रयत्न करता है। अपने गायन को अधिक प्रभावशाली बनाने के प्रयत्न में किसी ने लयकारी पर जोर दिया तो किसी ने स्वर के लगाव पर बल दिया। इसी प्रयत्न में कुछ गायकों ने अत्यंत प्रशंसनीय प्रयोग करके अपनी गायिकी की उत्तम शैली का विकास किया। इन्हीं गायिकियों ने शिष्य–प्रशिष्यों की परम्परा के रूप में अनेक पीढ़ियों तक चलने के बाद संगीत के विभिन्न घरानों का रूप धारण कर लिया। वर्तमान समय में यही ख़्याल गायिकी और घराना परम्परा भारतीय शास्त्रीय संगीत का आधार है।

6.3.3 घराने के नियम

विद्वानों के अनुसार, घराने की परस्पर भिन्नता को देखते हुए कुछ नियम बनाए, जो घराना शब्द का निर्वाह करने के लिए आवश्यक माने गए

- किसी घराने के लिए कम–से–कम तीन पिढ़ियों की आवश्यकता होती है। घराने के अन्तर्गत गुरु–शिष्य परम्परा के अनुसार किसी भी योग्य शिष्य को उसकी क्षमता के अनुसार अपने घरानों में शामिल करना तथा अपने ही पुत्र–पौत्रादि कुटुम्बियों को पीढ़ी–दर– पीढ़ी शिक्षित करना और अपनी परम्परा के अनुसार उसे ढालना दोनों ही आते हैं।
- प्रत्येक घराने के शिष्य अपने गुरु की आवाज और गायन शैली का अनुकरण करें यह आवश्यक है।
- हर घराने के कुछ मुख्य राग होते हैं और बंदिशें जिन्हें उस घराने का गायक प्रचलित करता है।
- घरानों की मौलिक गायिकी तथा उनकी गायकी के मुख्य सिद्धान्तों का पालन होना आवश्यक है।
- अन्ततः संयम, स्वर, आनुवंशिकता, संस्कारिता, प्रामाण्य, कुछ ऐसे तत्त्व हैं, जिनका कम व अधिक प्रयोग ही विभिन्न घरानों की गायकी की पहचान के रूप में परिलक्षित होता है।

विशेषताओं एवं विलक्षणता के आधार उत्तर भारतीय संगीत में जाने–माने घरानों का विवरण इस प्रकार है।

6.4. दिल्ली घराना

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि आज सांगीतिक जगत् में चारों ओर ख्याल का ही बोल–बाला है। इसी आधार पर उत्तर भारतीय संगीत में मुख्य रूप से पहचाने जाने वाले घरानों में से एक प्रमुख घराना दिल्ली घराना है। मुगल बादशाहों के पतन के बाद दिल्ली घराने की स्थापना का श्रेय तानरस खाँ जी को जाता है। इस घराने की परम्परा दिल्ली दरबार के सुप्रसिद्ध गायक व तानरस खाँ के गुरु अचपल मियाँ से प्रारम्भ होती है। यहाँ तक कि मियाँ अचपल को दिल्ली घराने के खलीफा के रूप में स्वीकार किया गया। महोदय भगवत शरण शर्मा के अनुसार, ''दिल्ली के 'डसाना'

नामक कस्बे में रहने वाले कादिर बख्श तथा इनके पुत्र कुतुब बख्श, जिनको बहादुरशाह जफर द्वारा तानरस खाँ की उपाधि प्रदान की गई थी, ये तानरस खाँ ही इस घराने के संस्थापक कहे गए।''

6.4.1 दिल्ली घराने की विशेषताएँ

दिल्ली घराने की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं

- राग की शुद्धता एवं सुन्दरता इस घराने की प्रमुख विशेषता रही। इस घराने की गायकी का अपना अलग अन्दाज है, इसका सम्बन्ध मुख्यतः सारंगियों से होने के कारण इसकी विलम्बित लय की चीजों में सूत, मीड गमक और लहक का काम विशेष रूप से परिलक्षित होता है।
- मध्य लय में स्वरों का परस्पर लड़–गुँथाव तथा जोड़–तोड़ का काम अपनी विशिष्टता को प्रस्तुत करता है।
- संगीत जगत् में तानों की जोड़–तोड़ सह–विविधता और वैचित्रयता हेतु इस घराने का विशेष स्थान है।

6.4.2 दिल्ली घराने से सम्बन्धित प्रमुख व्यक्तित्व

विद्वानों के अनुसार दिल्ली घराना केवल ख्याल गायन में ही पारंगत नहीं था, अपितु वाद्य संगीत में अपना विशिष्ट स्थान रखने वाले बहुत से कलाकार यहाँ उत्पन्न हुए। यथा, उमराव खाँ के शिष्यों में सरदार खाँ और अब्दुल अजीज खाँ ने प्रसिद्धि पाई। नन्हे खाँ, मम्मन खाँ तथा सारंगी वादक बुन्दू खाँ भी इस गायकी को आगे बढ़ाने वाले प्रमुख कलाकार थे। उस्ताद अहमद खाँ की शिष्याएँ श्रीमती कश्ष्णा बिष्ट एवं भारती चक्रवर्ती भी अपने प्रयत्नों से इस घराने को उन्नति को उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करने हेतु समर्थ रहीं।

6.5. आगरा घराना

हिन्दू धर्म के अनुयायी अलखदास और मलूकदास थे, जिन्होंने किसी कारणवश इस्लाम धर्म को अपना लिया था, इन्हें ही आगरा घराने के प्रारम्भक कहकर पुकारा जाता है। अन्य अनेक घरानों की तरह ही यह घराना भी ध्रुपद व धमार की परम्परा से ही विकसित हुआ है। संगीत जगत् में पहचाने जाने वाला प्रसिद्ध नाम हाजी सुजान खाँ जी अलखदास के पुत्र थे। अतः यह घराना विद्वानानुसार अकबर काल के हाजी सुजान खाँ से प्रारम्भ हुआ माना जाता है। इस घराने में ख्याल गायकी का आरम्भ सुजान खाँ साहब के पड़–पोते घग्गे खुदाबख्श द्वारा हुआ हुआ। विशेष ऐसा कहा जाता है कि खुदाबख्श साहब की आवाज बैठी होने के कारण इन्हें घग्गे खुदाबख्श कहा जाने लगा, जो आगरा घराने के अन्वेषक के रूप में जाने जाते हैं।

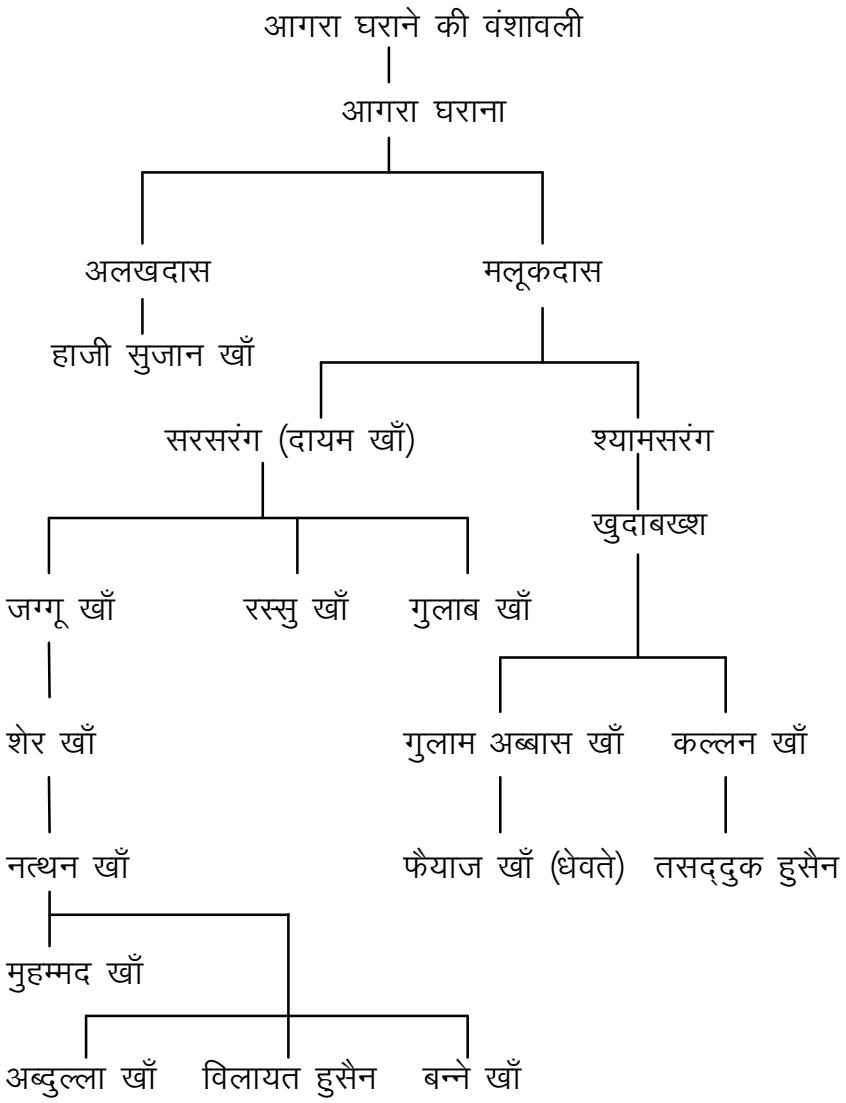

6.5.1 आगरा घराने की विशेषताएँ

आगरा घराने की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं

- इसमें नोम–तोम में आलाप किया जाता है।
- बन्दिशदार चीजों का गायन किया जाता है।

- इसमें ख्याल शैली के अन्तर्गत ध्रुपद अंग का प्राबल्य होने के कारण यह ध्रुपदांग ख्याल के नाम से भी जाना जाता है।
- लयकारी का प्रवाह।
- खुली और बुलन्द आवाज की गायकी।
- अर्थ के अनुरूप भाव की अभिव्यक्ति करना इसकी मुख्य विशेषता है।
- इस घराने की बोल तान इतनी आकर्षक व प्रभावी होती है कि दूसरे घराने के गायक शीघ्र ही प्रभावित हो जाते हैं।
- इस गायकी में सरलता के साथ–साथ संयमता की भावना का भी पूर्ण सन्तुलन बना रहता है।
- विलायत हुसैन खाँ ने कहा कि नत्थन खाँ ने एक निराला ढंग आरम्भ किया, वह था अति विलम्बित लय रखकर उसमें चौगुन, अठगुन व आड़ी लय में फिरत करके बन्धी हुई तानों व बोल–तानों को लेना।
- लयकारी के साथ ही बोल अंग का विस्तार और बोलो के साथ पलटों की बढत तथा ताल के विभिन्न खण्डो से तान की उपज शुरू करना आगरा घराने की प्रमुख विशेषता है।

6-6 ग्वालियर घराना

यह घराना ख्याल गायकी का सर्वप्रसिद्ध घराना है। ग्वालियर घराने हेतु यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि ख्याल की उत्पत्ति लखनऊ में हुई, दिल्ली में इसे संरक्षण मिला और ग्वालियर में आकर यह गायकी बुलन्दियों के शिखर पर पहुँच गई। वास्तव में यह लखनऊ घराने की ही देन है, इसे लखनऊ की जलवायु में उचित पोषण न प्राप्त होने के कारण अपना स्थायी निवास ग्वालियर को ही बनाना पड़ा।

इस घराने के संस्थापक मूलतः लखनऊ से ही सम्बन्धित थे, परन्तु उनके ग्वालियर में आकर बस जाने के कारण, जिस शैली का निर्माण इनके द्वारा हुआ वह ग्वालियर घराना कहलाया, जिसे सभी ख्याल घरानों की गंगोत्री कहा जाता है।

ग्वालियर घराने का आरम्भ नत्थन पीरबख्श 18वीं ई. को जाता है, परन्तु लखनऊ के उस्ताद गुलाम रसूल ही इस घराने के मूल पुरुष के रूप में पहचाने जाते है चूँकि इनकी 'वाणी' मुख्यतः कव्वाल वाणी ही रही, जिसके कारण लोगों ने कव्वाल बच्चों का घराना के नाम से इनके घराने को सम्बोधित किया। गुलाम रसूल साहब ध्रुपद, धमार, ख्याल और कव्वाली के उत्कृष्ट विद्वानों में से एक माने जाते थे।

इनके प्रपौत्र उस्ताद शक्कर खाँ और मक्खन खाँ प्रसिद्ध ख्याल गायक हुए। डॉ. सुशील कुमार चौबे के अनुसार, ''ग्वालियर घराने की इस गायकी में जिसे नत्थन पीर बख्श ने प्रचिलत किया था, ध्रुपद के गाम्भीर्य की पूरी झलक मिली थी और तब तक ध्रुपद और ख्याल का बँटवारा नहीं हुआ था।''

भगवत शरण शर्मा के अनुसार, ''नत्थन पीरबख्श के पुत्रों में हद्दू खाँ, हस्सू ख़ाँ और नत्थन ख़ाँ थे। हद्दू ख़ाँ के पुत्रों में मोहम्मद ख़ाँ और रहमत ख़ाँ तथा इनके भतीजे निसार हुसैन ख़ाँ प्रसिद्ध थे। हद्दू ख़ाँ के शिष्य राम–कृष्ण बुआ, दीक्षित पण्डित, जोशी बुआ और बालकृष्ण बुआ अधिक प्रसिद्ध हुए हैं।

इनमें बालकश्ष्ण बुआ इंचलकरंजिकर की शिष्य परम्परा में विष्णुदिगम्बर पलुस्कर, मिरासी बुआ, अनत्म मनोहर जोशी, भाटे बुआ, इंगले बुआ, अन्ना बुआ, विष्णु दिगम्बर के शिष्यों में ओंकारनाथ ठाकुर, वीआर देवधर, विनायक राव पटवर्द्धन, शंकरराव व्यास, नारायण राव व्यास तथा इनके पुत्र डी वी पलुस्कर आदि का नाम प्रमुख है।''

पण्डित वासुदेव जोशी के शिष्यों के बाल–कश्ष्ण बुआ इंचलकरंजिकर रहे, जिनके कारण ग्वालियर घराना का प्रचार सम्पूर्ण महाराष्ट्र में हुआ।

6-6-1 विशेषताएँ

ग्वालियर घराने की अपनी अलग ही विशेषताएँ हैं, जो निम्नलिखित हैं।

- इस घराने में आरम्भिक स्वर 'आ' कार में खुला व बुलन्द लगाया जात है। आवाज को दबाना या छुपाना इस घराने में निषिद्ध माना जाता है।
- इस गायकी की प्रमुख विशेषता जोरदार और खुली आवाज का प्रयोग है।
- इसमें राग का विस्तार क्रमानुसार किया जाता है।
- यह घराना मात्र गायन में ही नहीं अपितु ध्रुपद व धमार आदि सभी में उच्चकोटि प्रधान है।
- इसमें बोल–आलाप और बोल–तानों में बन्दिश के शब्दों के अर्थानुसार ही लयकारी की जाती है।
- इसकी गायकी में मर्दानापन, बुलन्द आवाज, गले का वजन और स्वरों पर अधिकार मुख्य रूप में दिखाई देता है।
- सम के बाद दूसरी मात्रा से गायिकी प्रारम्भ करना ग्वालियर घराने की विशिष्टता है।
- इसकी गायिकी अधिकतर झूमरा, तिलवाड़ा, आड़ाचारताल, विलम्बित एक ताल आदि में निबद्ध होती है।

6.7 किराना घराना

इस घराने के प्रतिनिधि गायक अब्दुल करीम ख़ाँ थे। डॉ. मधुबाला सक्सेना के अनुसार, "किराना घराने के संस्थापक उस्ताद अब्दुल करीम खाँ साहब का निवास स्थान उत्तर प्रदेश में किराना नामक ग्राम होने के कारण उनका घराना किराना घराना कहलाया।" इस घराने के मूल पुरुष सुप्रसिद्ध बीनकर बन्दे अली खाँ साहब को माना जाता है। ये गुलामतकी नामक किराने के एक प्रसिद्ध बीनकर के पोते थे। इनकी शिष्य परम्परा के पश्चात् ही अब्दुल करीम खाँ साहब हुए। वास्तविकता यह मानी जाती है कि यह घराना सारंगी वादकों का था जिसमें पहले सारंगी का अभ्यास अधिक हुआ तत्पश्चात् गायन अंगीकार किया गया, इसी कारण अब्दुल करीम खाँ व वहीद ख़ाँ को इस घराने का संस्थापक कहा जाता है। अब्दुल करीम ख़ाँ साहब ने संगीत की तालीम अपने वालिद काले ख़ाँ और चाचा अब्दुल्ला ख़ाँ से पाई थी। अब्दुल करीम ख़ाँ के गुरु अब्दुल रहमान ख़ाँ इसी घराने की शिष्य परम्परा में थे।

किराना घराने की वंशावली

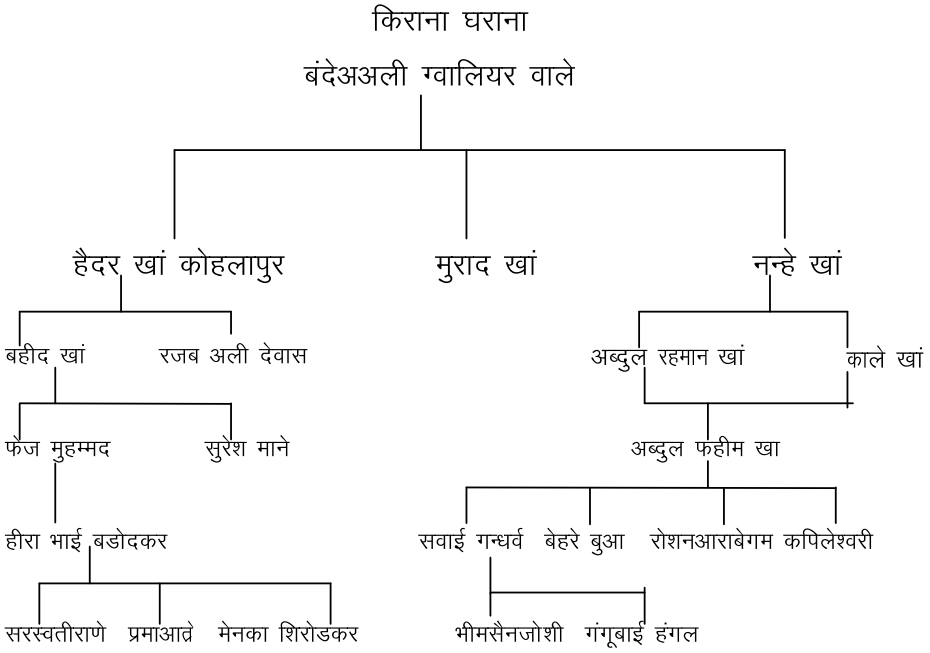

6.7.1 किराना घराने की विशेषताएँ

किराना घराने की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं

- उस्ताद अब्दुल करीम ख़ाँ द्वारा स्थापित इस घराने की विशेषताओं का जब हम विश्लेषण करते हैं

तब यह स्पष्ट होता है, कि इस घराने पर विशेष प्रभाव रहा। बीन वादक के सौन्दर्य तत्त्वों की कल्पना से प्रेरणा लेकर ख्याल गायकी का अविष्कार करने वाले माहन् कलाकार साहब करीम ख़ाँ द्वारा इस घराने ने प्रतिष्ठा पाई। इस घराने की गायकी वाले माहन् कलाकार साहब करीम ख़ाँ द्वारा इस घराने ने प्रतिष्ठा पाई। इस घराने की गायकी हिन्दुस्तानी संगीत जगत् में अपना विशेष स्थान रखती है। इस घराने की गायकी आलाप प्रधान है।

- राग के कुछ महत्त्वपूर्ण स्वरों को क्रमशः महत्त्व देना, व उन स्वरों को जाल इर्द–गिर्द फैलाकर गायन करना इस घराने की महत्त्वपूर्ण विशेषता है।
- यह घराना व इसकी गायकी तन्त्र वाद्यों पर आधारित है, इसलिए हर राग की बढ़त वीणा वादन के ढंग से, स्वरों की विभिन्न भावपूर्ण ढंग से बढ़त की जाती है।
- मूलतः बीनकारों का घराना होने के कारण विलम्बित लय, स्वर की दीर्घता, एक स्वर से दूसरे स्वर तक जीते समय स्वर को मींड की भाँति टूटने न देना, सुरीलापन तथा भक्ति–भाव युक्त आलापचारी इस गायकी की प्रमुख विशेषताएँ हैं। डॉ. शन्नो खुराना के अनुसार, सुर का लगाव ही इस घराने की विशेषता है।
- ठुमरी गाने की प्रथा विशेषता इस घराने में दृष्टिगोचर होती है। सरगम से राग का अत्यधिक विस्तार करना, इस घराने का विशेष गुण या पहचान बन गया है।
- इस घराने के संगीतज्ञों के अनुसार स्वर को गायिकी की आत्मा माना गया है।
- इसमें भाव की अपेक्षा बोल–बाँट को अधिक महत्त्व गया है।

माधुर्य के पुजारी करीम ख़ाँ साहब के स्व–शब्दों के अनुसार सुर गया तो सिर गया, ताल गया तो बाल गया।

6.7.3 किराना घराने मुख्य तत्त्व

इस घराने के प्रमुख कलाकारों की सूची में कई महान् व बड़े–बड़े धुरन्धरों के नाम शामिल किए गए, जिनके तेज प्रभाव व स्वर उच्चारण के वैचिन्य ने किराना घराने को अग्रसर करने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया; जैसे–मूल पुरुष बीनकार बन्दे अली ख़ाँ साहब, करीम ख़ाँ जी, करीम ख़ाँ जी के प्रमुख शिष्य–हीराबाई, संवाई गान्धर्व, विश्वनाथ जाधव, दशरथ मुले, बेहरे बुआ, बन्नू बाई (खाँ साहब की पत्नी) हरिश्चन्द्र कपिलेश्वरी, आदि। इस घराने के अन्य गायकों में पण्डित भीमसेन जोशी, फिरोज दस्तूर, डॉ. देश पाण्डे, गंगू बाई हंगल, स्व. रजव अली ख़ाँ, उस्ताद अमीर ख़ाँ पाकिस्तानी सुप्रसिद्ध गायिका रोशन आरा बेगम इत्यादि का नाम प्रकाशित है।

6.8. पटियाला घराना

भारतीय सांगीतिक इतिहास के अन्तर्गत पंजाब को 19वीं शताब्दी के मध्य में श्रेष्ठता मिली, जब मुगल राज्य के पतन के पश्चात् काफी संख्या में निपुण संगीतज्ञों ने दिल्ली दरबार छोड़कर पंजाब को अपना आश्रय स्थान चुना। इस घराने के प्रसिद्ध गायक उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ साहब थे। ऐसा माना जाता है कि अलिया और फत्तू नामक दोनों कलाकारों का जन्म पटियाला में ही हुआ था, इन्होंने जयपुर घराने के ख़ाँ साहब से भी शिक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् दिल्ली घराने के तानरस ख़ाँ से भी शिक्षा पाई। दिल्ली दरबार छोड़कर पटियाला घराने में प्रवेश करने वाले संगीतज्ञों का पंजाब की विभिन्न रियासतों; जैसे–पटियाला, नाभा, लाहौर, कपूरथला आदि में इन शास्त्रीय संगीतज्ञों का हार्दिक स्वागत किया गया। पटियाला दरबार के प्रसिद्ध सारंगी वादक कालू ख़ाँ को इस घराने का अन्वेषक माना जाता है। (अलिया फत्तु इन्हीं के पुत्र हैं)

घरानों से सम्बन्ध रखने वाले व्यक्ति इस घराने के चमकते सितारे उस्ताद बड़े गुलाम अली ख़ाँ, गुलाम साहब के चाचा मियाँ जान काले ख़ाँ व इनके पिता अली बख्श थे। इसके प्रसिद्ध विद्वानों की सूची के अन्तर्गत अन्य नाम भी शामिल है; जैसे–प्रसिद्ध कवि मिर्जा गालिब, तानरस ख़ाँ, कालू मियाँ, अली बख्श, फतह अली, मियाँ अहमद जान ख़ाँ तथा इनके चारों पुत्र मुबारक अली, फाकुर अली, बाकर अली, इलायाज हुसैन, राजमनी बाई, गुल मुहम्मद, निर्मला अरुण, लक्ष्मीशंकर आदि।

6.8.1 पटियाला घराने की विशेषताएँ

वैसे तो इस घराने की कई विशेषताएँ हैं, जिनके कारण यह घराना ख्याल गायकी के क्षेत्र में विशिष्टता रखता है। इसमें तानों की अद्‌भुत तैयारी इसकी मुख्य विशेषता है

- यह घराना अपनी तैयारी व रंगीनियत के कारण अत्यन्त प्रसिद्ध है।
- इस गायिकी के अन्तर्गत अति द्रुत गति वाली लय का संचार किया जाता है।
- इस घराने की गायकी में वक्र अलंकारिक फिरत युक्त तानों, स्वरों का भावुक प्रयोग, गमक अंग; तराने की गायिकी के अन्दाज से यह घराना दूसरे घरानों से भिन्न है।
- टप्पा अंग की ठुमरी गायन में पटुता।
- प्रचलित और सरल राग इस घराने की विशेषता है।
- इस घराने की विशेषता तैयारी के साथ ही कोमलता में भी है।
- संक्षिप्त तथा कलापूर्ण ख्याल की बंदिशें।

इस प्रकार पंजाब का टप्पा, सिख शबद, सूफी वाणी से विद्यमान इस घराने की गायिकी का विकास हुआ और यह नवीन घराने के रूप में जनमानस के सामने आया। इस घराने के मुख्य प्रतिनिधि बड़े गुलाम अली साहब ने इसे विशिष्ट घरानों की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया।

6.9. तन्त्री वाद्य में घराने (भूमिका)

तन्त्री वाद्यों के परम्परागत घरानों का विकास उन्नीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में ही प्रारम्भ हुआ था। उस समय तक वीणा तथा रबाव आदि के परम्परा युक्त घरानेदार वादकों के लिए सितार नया नहीं था। अतः गायन के घरानों के समान सितार के घरानों की नींव परम्परागत पुराने घरानों में नहीं मिलती, घराने अवश्य निर्मित हुए पर इस समय जो सितार वादन प्रचलित है, उसमें व्यक्तिगत प्रतिभा की ही प्रधानता है और बहुत हद तक उसमें वीणा और रवाब की वाद्य शैली का परित्याग है। आज एक अच्छा वादक उन सभी शैलियों का गुण अपने वादन में भरने का प्रयास करता है, जिससे श्रोता आनन्दित हो और उसके वादन की प्रशंसा करे और इस दृष्टि से घराने की परम्परा टूटती जा रही है इसी कारण सितार के घरानों के समक्ष एक प्रश्न चिह लग गया तथा सितार के घराने सही दृष्टि से अभी तक विकसित नहीं हुए हैं उनमें से कुछ सारंगी, रवाब या सरोद वादक भी थे अतः सितार वादन घरानेदारी के क्रम में तो आता नहीं है, फिर भी सितार के जो घराने स्थूल रूप से जाने जाते है, वो निम्नलिखित हैं

6.10 सितार का सेनिया घराना

अकबर के नवरलों में से तानसेन एक थे। अकबर ने तानसेन की कला–कौशल से प्रभावित होकर इन्हें 'कण्ठाभरण वाणी विलास' की उपाधि प्रदान की थी। तानसेन परम्परा से सम्बन्धित लोग सेनिया कहलाते हैं। इनकी परम्परा में लखनऊ के प्यार ख़ाँ और जाफर ख़ाँ प्रसिद्ध रवाविए थे। तानसेन को ही सेनिया घराने वादक मसीत ख़ाँ हुए हैं। मोहम्मद करम इमाम के अनुसार, गोबरहार वाणी तानसेन के द्वारा ही प्रचार में आई तथा ऐसा भी माना जाता है कि घराना परम्परा भी तानसेन की ही देन है।

वाद्य संगीत में वादन शैली को बाज कहा जाता है तथा इन शैलियों में परिवर्तन होने से विभिन्न बाज़ों का निर्माण होता है। सितार वादन के क्षेत्र में भी इसी प्रकार पीढ़ी –दर–पीढ़ी वादन शैली में अन्तर आने से विभिन्न शैलियों का निर्माण हुआ, इनमें प्रमुख है–सेनिया बाज, जयपुरी बाज, मसीतखानी बाज, रजाखानी बाज तथा पूर्वी बाज। भारतीय संगीत में सितार वादन का एक सेनिया घराना ही माना जाता है। कहा जाता है कि तानसेन की मृत्यु के बाद इनके वंशज दो भागों में बँट गए, जिन्होंने अलग–अलग शैलियों का विकास किया। इन्हें बीनकार और खबिए कहा गया। बाद में इन्हीं के द्वारा विभिन्न घरानों का प्रादुर्भाव हुआ।

तानसेन की वंश परम्परा और शिष्य इतनी विशाल व समश्द्धशाली है कि बहुत से गायन और वादन के घरानों का सम्बन्ध अपने आप ही इनसे जुड़ जाता है। इनके वंशजों में सुरतसेन, तानतरंग, सुहेलसेन, बिलासखाँ, सुधीनसेन हैं। 'संगीत सुदर्शन' में तानसेन और उनके ज्येष्ठ पुत्र तानतरंग की वंशावली सितार वादक अमृतसेन तक इस प्रकार है। तानसेन तानतरंग ख़ाँ, सूरज सेन, सुफल सेन, झण्डे सेन, सुभाग सेन, बाल सेन, रूप सेन, लाल सेन, फाजिल सेन, मुरादसेन, सुख सेल रहीम सेन तथा अमृतसेन आदि। इयी घराने के अन्तर्गत रामुपर के उमराव

ख़ाँ खण्डारें, उनके पुत्र रहीम ख़ाँ तथा अमीर ख़ाँ और इनके पुत्र वजीर ख़ाँ आदि कलाकार उत्तम बीनकार थे। लखनऊ के प्यार ख़ाँ और जफर ख़ाँ प्रसिद्ध रवाबिए तथा मसीतखाँ सितारवादक थे। जयपुर के अमृत हुसैन और ग्वालियर के महाराज माधवराज सिन्धिया के गुरु अमीर ख़ाँ इस घराने के उत्तम सितार वादक थे, इनके अतिरिक्त अन्य कलाकार; जैसे–बहादुर हुसैन ख़ाँ, अली मुहम्मद ख़ाँ सादिक अली, नवाब कल्बे अली और उनके भाई हैदर अली ख़ाँ व रामपुर वाले हैदरअली आदि का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने रवाब, वीणा और सुरसिंगार इन तानों वाद्यों तथा कण्ठ संगीत में निपुणता प्राप्त करके तानसेन घराने को समृद्ध किया।

मोहम्मद शाह रंगीले के दरबारी गायक नियामत ख़ाँ थे इन्हें सितार पर बजाने वाली गत का प्रथम रचनाकार कहा जाता है। इनके बाद इनके छोटे भाई के पुत्र फिरोज ख़ाँ का नाम सितार की गतों के निर्माण के लिए उल्लेखनीय है, इन्होंने बहुत सी गतों की रचना की, जिन्हें फिरोजखानी गतों के नाम से जाना गया। फिर इनके पुत्र मसीत ख़ाँ हुए, जिन्होंने अपनी विशेष सितार की गतों को मसीतखानी गत नाम दिया। सेनिया घराने के सितार और सुरबहार वादक उस्ताद मुश्ताक अली ख़ाँ आधुनिक युग के प्रसिद्ध संगीतज्ञ हैं।

6.10.1 सेनिया घराने के वादन शैली की विशेषताएँ

वादन शैली की विशेषताएँ निम्नलिखित है

- विद्वानों के अनुसार, सितार से गत विस्तार तथा आलाप के लिए ध्रुपद की चार बानियों में से गोबरहार, डागुर तथा खण्डहार वाणी का बहुत प्रभाव पड़ा।
- सितारवादन में जोड़ का भाग खण्डहार वाणी का अनुसरण ही प्रतीत होता है।
- तत्कालीन वादक जोड़ वादन में छन्दबद्ध रूप का वादन किया करते थे तथा लड़ी अंग व तारपरन की सहायता से स्वर विस्तार करते थे।
- सितार वादन की इस वादन शैली में वादकों ने आलाप एवं जोड़ आलाप के बाद ध्रुपद के आधार पर विभिन्न गतों के निर्माण की शुरूआत की।
- 18वीं शताब्दी के सितार का बाज वास्तव में वीणा वादन का ही अनुसरण है।
- यह बाज सीधा, सरल व मध्य लय तथा तीनताल में निबद्ध सरल राग विस्तार तथा अन्त में जोड़ के काम से युक्त होता था, इसमें अधिक क्लिष्ट तानों का प्रयोग नहीं किया जाता था तथा इसमें बोलबॉट का काम अधिक दिखाया जाता था।
- सेनियों ने 12 प्रकार की वादन क्रियाओं; जेसे–जोड़ आलाप, झाला, आलाप, ठोक झाला, गत लड़ी, तोड़ा लड़ गुँधाव, लड़ लपेट, तारपरन और कतर आदि को सेनिया बाज की वादन शैली में प्रयोग

किया तथा यही इस घराने के सितार वादन का अभिन्न अंग बने।

6-11-1 पूर्वी बाज

विद्वानों के अनुसार, झझर, जयपुर, अलवर में मसीतखानीबाज तथा काशी, जौनपुर, लखनऊ पूर्वी बाज, विकसित हुआ। पूर्वी बाज के प्रवर्तक मसीत ख़ाँ के शिष्य गुलाम रजा ख़ाँ माने जाते हैं। यह बाज मुख्यतः ख्याल, तराने व ठुमारी पर आधारित है।

इस रवानी गत वादन को इसलिए पूर्वी बाज कहा जाता है, क्योंकि इसका विकास अधिकतर पूरब में, काशी, जोनपुर, फैजाबाद, लखनऊ, फरूखाबाद तथा इटावा आदि पूर्वी बाज की एक विशिष्ट पहचान बनाई।

6.11.2 शैलीगत विशेषताएँ

इस पूर्वी या रजाखानी बाज में गत के बोलों के कटाव पर विशेष ध्यान दिया जाता है; जैसे–'दा' और 'रा' के बोल के अतिरिक्त 'दिर दा' 'दा रां दा' आदि बोलों का प्रयोग इसकी महत्त्वपूर्ण विशेषता है, जो इसे मसीत रखानी बाज से पृथक् कर देती है तथा अधिक चंचल व स्वतन्त्र रूप प्रदान करती है। इसी बाज के वादन में मुख्यतः गत प्रारम्भ करने से पूर्व संक्षिप्त आलाप, गत एवं गत की ही विभिन्न लयकारियों को प्रस्तुत करने का विधान है। इसमें दाहिने हाथ के बोलों का महत्व अधिक है। इस शैली मं चिकारी व जोड़, झाला का काम बहुत कम या नहीं के बराबर होता है, किन्तु गत वादन के बीच में विभिन्न छोटे–छोटे स्वर समूहों का प्रयोग किया जाता है तथा गत वादन के पश्चात् विस्तार अंग की तानों का वादन किया जाता है। इस बाज के वादकों की अधिकतर रचनाएँ ठुमरी अंग के रागों; जैसे–पीलू, भैरवी खमाज, काफी गारा, देश जयजयवन्ती तथा तिलक कामोद पर आधारित होती हैं। बोल प्रधान गतकारी तथा संयुक्त बोलों का प्रयोग इस बाज की महत्त्वपूर्ण विशेषता मानी जाती है।

इसमें लड़ी अंग का प्रयोग बराबर की लय में होता है तथा गत बजाते समय लड़न्त व तार परन का प्रयोग भी इसकी प्रमुख विशेषता है। वर्तमान समय में रजाखानी व मसीतखानी बाजों की गतों को वादक प्रायः एक साथ प्रयोग करते हैं। इसे ख्याल गायन में क्रमशः द्रुतख्याल व विलम्बित ख्याल के समान माना जाता है।

6.12.1 रामपुर घराना (सितार)

रामपुर घराना सुरसिंगार, वीणा और ध्रुपद के अनुयायी सेनिया घराने से सम्बन्धित है। रामपुरा सेनिया घराने का मुख्य केन्द्र माना गया है तथा इस घराने के प्रवर्तक अमीर ख़ाँ तथा बहादुर हुसैन ख़ाँ माने जाते हैं। सेनिया घराने के बीनकार और ध्रुपद गायक प्यार ख़ाँ, जाफर ख़ाँ और बासत ख़ाँ के वंशज बहादुर

हुसैन ख़ां थे। बहादुर हुसैन ख़ां मुख्यतः सुरसिंगार वादक थे, परन्तु ये गायन की शिक्षा, भी दिया करत थे। डॉ. सुशील कुमार चौबे के अनुसार, बहादुर हुसैन ख़ाँ साहब का रूझान वाद्य संगीत की ओर अधिक था, इसलिए वह अपने ढंग के एक अद्वितीय वादक माने गए हैं। रामपुर घराने के दूसरे प्रमुख संगीतज्ञ 'अमीर ख़ाँ सदारंग बशंज उमराव ख़ाँ के सुपुत्र थे और रिश्ते में बहादुर हुसैन ख़ाँ के दामाद थे।

अमीर ख़ाँ ध्रुपद गायक, सुरसिंगार तथा वीणा वादक थे। रामपुर के बहादुर हुसैन ख़ाँ तथा अमीर ख़ाँ की प्रमिभा से प्रभावित होकर रामपुर तथा अन्य स्थानों के गायक तथा वादकों ने इनका शिष्यत्व ग्रहण किया। अमीर ख़ाँ के शिष्यों में हैं–बुनियाद हुसैन, फिदा हुसैन, मोहम्मद हुसैन। अमीर ख़ाँ के सुपुत्र वजीर ख़ाँ ने भी इस घराने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

ये भी उच्चकोटि के ध्रुपद गायक और बीनकार थे। इनकी शिष्य परम्परा इस प्रकार है–अब्दार रहीम, वजीर ख़ाँ, अल्लाउद्दीन, नवाब हामिद अली, तारा प्रसाद, नसीर अली, प्रथमनाथ बन्दोपाध्याय, या दवेन्द्र, हाफिज अली, मेहन्दी हसन ख़ाँ, मोहम्मद हुसैन तथा मुश्ताक हुसैन ख़ाँ। बहादुर हुसैन ख़ाँ की शिष्य परम्परा–अली हुसैन, इनायत हुसैन, मजरु ख़ाँ तथा मोहम्मद हुसैन आदि हैं।

वजीर ख़ाँ के पौत्र दबीर ख़ाँ इस वंश के अन्तिम संगीतज्ञ माने जाते हैं। पण्डित विष्णुनारायण भातखण्डे बजीर ख़ाँ साहब के भी शिष्य थे। दबीर ख़ाँ की शिष्य परम्परा इस प्रकार है मोहन मोइत्रा, जितेन्द्र मोहन सेन गुप्ता, कालीदास सन्याल, विरेन्द्र किशोर राय चौधरी आदि उल्लेखनीय हैं। वर्तमान में रामपुर घराने के शिष्यों और प्रशिष्यों ने भारतीय संगीत का परचम पूरे विश्व में फहराया है। ध्रुपद, धमार, ख्याल और विभिन्न वाद्यों का जैसा संगम रामपुर घराने में पाया जाता है। अन्य किसी घराने में दृष्टिगोचर नहीं होता।

6.13. घराना परम्परा के गुण एवं दोष

संगीत में घराना विशेष स्थान पर प्रचलित अथवा व्यक्ति विशेष द्वारा प्रवर्तित संगीत की रीति या शैली से है। घराना परम्परा के माध्यम से ही संगीत की प्राचीन परम्परा सुरक्षित रही। यह प्रशंसनीय है, कुछ सीमा तक राज्याश्रयों द्वारा दी गई सुविधाओं के कारण राज्याश्रित संगीतज्ञ निश्चित होकर संगीत साधना कर पाए। दूसरी ओर एकान्तवासी संगीतज्ञ भी प्रशंसा के पात्र है, जिन्होंने भौमिक सुख–सुविधाओं से दूर रहकर संगीत साधना की। इस घरानेदार शिक्षक पद्धति के अस्तित्व के कारणों में कुछ इस प्रकार हैं, जो गुरु–शिष्य के आपसी सम्बन्ध पर आधारित है। जिस तरह किसी भी चीज में गुण एवं दोष दोनों होते हैं, इसी तरह घराना परम्परा में बहुत सारी अच्छाइयाँ है, परन्तु कुछ खामियाँ भी हैं।

6.14.1 घराना परम्परा के गुण

घराना परमपरा के प्रमुख इस प्रकार हैं

- घरानेदार परम्परा के अन्तर्गत गुरु अपनी लगन एवं साधना से बनाई हुई अपनी गायकी को शिष्य के कण्ठ में उतारने के लिए प्रयत्नशील रहता था, जोकि सीना व सीना तालीम के माध्यम से दी जाती थी।
- इस परम्परा में गुरु कठिन परीक्षा सुयोग्य और सुपात्र शिष्य का अनुमान लगाकर संगीत शिक्षा प्रदान करता था अर्थात् गुरु बहुमुखी प्रतिभा लगन, सेवा तथा कला में विशेष अभिरुचि रखने वाले शिष्य को ही चुनते थे।
- शिष्य अपने गुरु के साथ ही रहते थे, जिससे व्यक्तिगत ध्यान देना गुरु के लिए सहज हो जाता था। जिसमें शिष्यों की संख्या भी सीमित रहती थी और शिक्षा भी गुरु अपने अनुसार देता था, जिससे अभ्यास के समय मार्गदर्शन करना सरल हो जाता था। शिष्य को गुरु के समक्ष घण्टों बैठकर सीखने का अवसर मिलता था और इस प्रकार उसकी कमियाँ भी दूर होती रहती थीं।
- गुरु–शिष्य के बीच में पिता और पुत्र जैसा स्नेह, श्रद्धा और विश्वास का सम्बन्ध होना चाहिए तथा शिष्य में धैर्य, संयम, परिश्रम और अपने गुरु के प्रति आस्था होना आवश्यक है। इस प्रकार शिक्षक का सम्बन्ध इस पद्धति में अत्यन्त सुदश्ढ़ था।
- गुरु अपने शिष्य को निःशुल्क शिक्षा देता था। अतः शिष्य के समक्ष धन की समस्या नहीं होती थी। शिक्षा पूर्ण होने पर शिष्य अपने गुरु को गुरुदक्षिण देता था।
- अपने घराने के नियम, कायदे परम्पराओं, व्यवहार, अनुशासन एवं आचरण को अपनी वंश परम्पराओं के समान दिया जाता था। साथ ही शास्त्रीय संगीत के मूल सिद्धान्तों एवं उसकी मर्यादा का पालन दृढ़ता कार्यकाल में अपनी कला का प्रदर्शन करने का अवसर मिल जाता था।
- बिना गुरु की आज्ञा के शिष्य अपना कार्यक्रम नहीं कर सकता था और कार्यक्रम देने के लिए कड़ा परिश्रम करना पड़ता था, जिससे यह स्वतः ही अनुशासित हो जाता था। घरानेदार शिक्षा पद्धति ने परम्परा और मर्यादाओं के आधार पर हा एक विद्यार्थी को स्वतन्त्र अस्तित्व होने का प्रयास किया तथ समाज में उसकी स्वतन्त्र पहचान बनाने की चेष्टा की।

6-14-2 घराना परम्परा के दोष

इन सभी गुणों के साथ घरानेदार शिक्षण पद्धति में कुछ निम्न दोष भी अनुभव किए गए, जिसके कारण ही शिक्षण की नींव रखी गई

- अन्ध श्रद्धा और अन्ध भक्ति होने के कारण ही शिष्य अपने गुरु का अनुकरण करने की अपेक्षा अन्धानुकरण करने लगते थे, जिससे शिष्य की बौद्धिक परिपक्वता संगीत प्रज्ञा एवं प्रतिभा की अवहेलना होती थी, इसके अतिरिक्त गुरु में निहित शारीरिक दोष या कण्ठ ध्वनि के दोष भी शिष्य ग्रहण कर लेते थे।

- इस शिक्षा पद्धति में सामान्य विद्यार्थी को प्रवेश नहीं मिल सकता था, क्योंकि गुरु के वंशज अथवा अत्यन्त प्रतिभाशाली व्यक्ति का ही चयन होता था।
- इस पद्धति में निश्चिय पाठ्यक्रम अथवा समयावधि नहीं होती थी, सब कुछ गुरु पर ही निर्भर करता था। जिस शिष्य की सेवा से गुरु प्रसन्न हो जाता था, उसी को शिक्षा दी जाती थी। प्रायः शिष्यों को कई–कई वर्षों तक गुरु गृह में रहना पड़ता था। तब उन्हें संगीत का ज्ञान होता था।
- घरानों में आपसी द्वेष के कारण अन्य घरानों के कलाकारों के प्रति हीन भावना रहती थी।
- कभी–कभी प्रतियोगिता की भावना ये या दूसरे घराने से ईर्ष्या के कारण अपनी गायकी में विशेष प्रकार की तानों या अलंकारों का प्रयोग कर उन्हें गायकी की पहचान बना लिया जाता था और पूर्व प्रसिद्ध गायकी की मर्यादाओं और उसके प्रमुख अंगों की अवहेलना कर दी जाती थीं।
- शिष्य की कण्ठध्वनि के अनुरूप सांगीतिक अलंकरणों का प्रयोग न करके गुरु के द्वारा प्रकाशित संगीत अलंकरणों को ही अपनाना पड़ता था।
- शिष्य अपनी जिज्ञासा गुरु के समक्ष प्रकट नहीं कर सकता था तथा किसी राग का नाम पूछना भी अनुशासनहीनता माना जाता है।
- शिष्य अपनी कल्पना शक्ति या रुचि अनुसार राग में कुछ सौन्दर्य वृद्धि नहीं कर सकता था, जिससे शिष्य में सृजनात्मक शक्ति का अभाव रहता था।
- इस प्रणाली में संगीत के व्यावहारिक पक्ष पर ही अधिक बल दिया जाता था और राग शास्त्र से बिल्कुल अनभिज्ञता होती थी।
- इस प्रणाली में संगीत के अतिरिक्त अन्य शिक्षाओं का अभाव था। अधिकतर संगीतकार आधुनिक शिक्षा पद्धति से सर्वथा अपरिचित थे, जिससे उनको समाज में सम्मान की दशष्टि से नहीं देख जाता था।
- इस प्रणाली में कभी–कभी नैसर्गिक प्रवृति होने पर भी अपने वंशजों को विवशतापूर्ण संगीत शिक्षा प्राप्त करने के लिए बाध्य किया जाता था, जिससे अयशस्वी कलाकार उत्पन्न होते थे।
- संगीत के रुचि न रखने वाले सामान्य विद्यार्थियों के साथ अन्याय होता था उनको कई–कई वर्षों तक गुरु के सानिध्य में रहकर तथा उनके सारे गृहकार्य करने के बाद भी संगीत शिक्षा से वंचित रखा जाता था।

घरानों में निहित संकीर्णता के कारण ही संगीत शिक्षा प्रमुख और योग्य शिष्यों को एकान्त में दी जाती थी और उसे किसी अन्य को न दिए जाने का वचन भी शिष्य से ले लिया जाता था, परन्तु

ऐसी विद्या को विकसित होने का अवसर नहीं मिल पाता था। शिष्य–प्रशिष्यों की परम्परा से प्राचीन बन्दिशें गायकी के स्वरूप तथा गायन शैलियाँ सुरक्षित तो रहीं, परन्तु ये घरानों तक ही सीमित होकर रह गई और संगीत के प्रसार–प्रचार का मार्ग अवरूद्ध हो गया।

मध्यकाल में संगीत शिक्षा का आधार घरानों पर ही टिका था, परन्तु घरानों में निहित विभिन्न दोषों के कारण मध्यकाल में संगीत की व्यवस्थित शिक्षा प्रणाली के दर्शन कहीं नहीं होते। यद्यपि कुछ संगीतज्ञों के प्रयत्नों सें संगीत ग्रन्थें की रचनाएं अवश्य होती रहीं, किन्तु क्रियात्मक संगीत घरानों तक सीमित होकर रह गया और आम जनता संगीत से दूर हो गई।

इस शिक्षा पद्धति के अनुसार कई वर्ष तक तन, मन और धन से गुरु की सेवा के उपरान्त शिष्य संगीत की शिक्षा तो ग्रहण पर लेता था, लेकिन समाज में रहने के लिए उसे अन्य आवश्यक और व्यावहारिक बातों का ज्ञान नहीं हो पाता था। कारण संगीत शिक्षा पूर्ण होने पर उसे गायन के कार्यक्रमों पर ही निर्भर रहना पड़ता था। इसके साथ ही घराना परम्परा में आए दोषों का अनुभव किया गया और समझ लिया गया कि संगीत शिक्षा का इसी पारम्परिक प्रणाली को बदले बिना सभ्य समाज में संगीत को प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता। अतः इस प्रकार संगीत में व्यक्तिगत शिक्षा के स्थान पर संस्थागत शिक्षण प्रारम्भ हुआ।

6.15 CONCLUSION

इस प्रकार हमने इस विषय में घराना शब्द का अर्थ एवं परिभाषाएँ घरानों का उद्‌भवए घरानों का विकास घराने के नियमए दिल्ली घराना दिल्ली घराने की विशेषताएँ दिल्ली घराने से सम्बन्धित प्रमुख व्यक्तित्व आगरा घराना आगरा घराने की विशेषताएँ ग्वालियर घरानाए विशेषताएँ किराना घरानाए किराना घराने की विशेषताएँ किराना घराने मुख्य तत्त्व तन्त्री वाद्य में घराने सितार का सेनिया घराना सेनिया घराने के वादन शैली की विशेषताएँ पूर्वी बाजए शैलीगत विशेषताएँ एरामपुर घराना (सितार) घराना परम्परा के गुण एवं दोष आदि के बारे में जाना तथा इस निषकर्श पर पहुचते है कि घरानों के विकास के साथ–साथ ही भारतीय संगीत का विकास हुआ तथा घरानों ने संगीत को संरक्षित करके विकसित होते रहने देने का अवसर प्रदान किया है।

6.16 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. Write down meaning of ghrana in Indian classical music.
2. Write down the evolution and development of gharana in Indian music.
3. Write down the contribution of gharanas in the development of Indian classical music
4. Name the main and prominent gharanas of Indian classical music (Vocal and Instrumental/sitar)

5. What are the main principals on the basis of which different gharans of music are differentiated from each other.

6. Mention the main gharanas of vocal music and describe their main qualities.

7. Mention the main gharanas of Instrumental music(sitar) and describe their main qualities.

8. Write down the qualities and shortcomings of gharana system in Indian classical music.

6.17 REFERENCES/ BOOKS CONSULTED

1. हिन्दी शब्दकोश रामचंद्र शर्मा

2. नाटयशास्त्र भरत

3. संगीत घराना अंक

4. संगीत ग्वालियर घराना कश्ण्णराव शंकर पंडित

5. संगीत में घरानों की चर्चा

6. खयाल गायकी के विविद घराने

7. भारतीय संगीत का इतिहास

8. हमारा आधुनिक संगीत

9. घरानेदार गायकी

10. संगीत सुदशर्न

11. भारतीय संगीतकोश

******

CLASSIFICATION OF RAGAS DURING ANCIENT PERIOD.

7.1 Introduction.

7.2 Objectives.

7.3 Ancient period classification

7.3.1 जाति वर्गीकरण (भरत मुनि द्वारा)

7.3.2 भरत के दसविधि जाति लक्षणाम

7.3.3 ग्राम राग वर्गीकरण (मतंग मुनि द्वारा)

7.3.4 नारद के अनुसार राग वर्गीकरण

7.4 Sum up.

7.5 Examination Oriented Questions.

7.6 References/Books.

7.1 INTRODUCTION

Classification becomes very vital and essential when it comes to the quantitative or numeral analysis or existence of things. This is a law of nature and everybody has to abide by it. In the same fashion, the classification occurs in music also wheather it is Swar,Taal, Raag or anything else. The scholars have classified the Raags into various categories during the ancient period. So in this topic the students will have to know about the same.

7.2 OBJECTIVES

Before Raag, there prevailed Jati Gayan parampara. Classification helps the students to be familier of "Jati Gayan" and makes them to learn that what was it actually. Secondly, it helps them to distinguish between different families or cluster of Raag and to know the individuality and characteristic features of Raags and their respective families.

7.3 Ancient Period Classification

विभिन्न कालों में जनरुचि में परिवर्तन के अनुसार संगीत में बदलाव आता है अर्थात् संगीत परिवर्तनशील है। सम्भवतः इसी कारण प्राचीन काल से आधुनिक काल तक देश, काल और परिस्थितियों के आवर्तन और अनुवर्तन के फलस्वरूप रागों का वर्गीकरण भी भिन्न रूपों में होता आया है। गायन शैलियाँ बदलती रही हैं। संगीत के इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि भिन्न–भिन्न विद्वानों ने रागों का विभिन्न ढंग से वर्गीकरण किया है।

राग वर्गीकरण के इतिहास को हम तीन कालों में बाँट सकते हैं

(1) प्राचीन काल

(2) मध्य काल

(3) आधुनिक काल

अब हम प्राचीनकाल में राग वर्गीकरण का विस्तश्त वर्णन करेंगे।

प्राचीन काल इस काल में तीन विद्वानों के संगीत विषयक ग्रन्थ उपलब्ध हैं

1. भरत कृत "नाट्य शास्त्र"
2. मतंग कृत "बश्हद्ददेशी
3. नारद कृत (1) नारदीयशिक्षा
   (2) संगीत मकरंद

7.3.1 जाति वर्गीकरण

भरत कृत नाट्य शास्त्र में

भरत ने स्वयुग में प्रचलित समस्त गीत शैलियों को जो गायन योग्य थी, उन सभी का विभाजन 'जाति' के अर्न्तगत किया है।

इस पद्धति के अनुसार प्राचीन काल में रागों के स्थान पर जाति गायन की प्रथा प्रचलित थी। रागों के पूर्व रूप को ही जाति कहते हैं। प्राचीन काल में कुल तीन ग्राम μ षडज, मध्यम और गन्धार माने जाते थे और गन्धार ग्राम प्राचीन काल में ही लुप्त हो चुका था। भरतकृत "नाट्यशस्त्र" में यह वर्णन है कि शेष

दो ग्रामों से 18 जातियाँ उत्पन्न हुईं **μ** षडज ग्राम से सात और मध्यम ग्राम से ग्यारह। इन जातियों को "शुद्धा" और 'विकृता" भागों के अन्तर्गत बांटा गया। इनमें 7 शुद्ध और 11 विकृत मानी गई। षड़ज ग्राम की चार जातियाँ **μ** षाडजी, आर्षभी, धैवती और नैषादी और मध्यम ग्राम की 3 जातियाँ गांधारी, मध्यमा और पंचमी शुद्ध मानी गई। ये ग्राम सातों स्वरों के आधार पर रखे गये। शेष 11 जातियाँ **μ** 3 षड़ज की और 8 मध्यम ग्राम की विकृत मानी गई। इस प्रकार कुल 18 जातियाँ हुई।

षडज ग्राम		**मध्यम ग्राम**	
1.	षाड़जी	1.	गांधारी
2.	आर्षभी	2.	मध्यमा
3.	धैवती	3.	पंचमा
4.	नैषादी	4.	रक्तगांधारी
5.	षड़ज कौशिकी	5.	गांधारी दीच्यवा
6.	षड़जोदीच्यवाती	6.	गंधार पंचमी
7.	(षडजोदोत्वा)	7.	मध्यमोदीच्यवा
8.	षडजमध्यमा	8.	आंध्री
		9.	नन्दयन्ती
		10.	कार्मारवी
		11.	कौशिकी

शुद्ध जातियाँ वे थीं जिनमें सातों स्वर प्रयोग किये जाते थे और जिनका नामकरण सातों स्वरों के आधार पर हुआ था, जैसे षाडजी, आर्षभी, गांधारी, मध्यमा, पंचमी, धैवती आदि। इनमें नाम स्वर ही ग्रह, अंश और न्यास होते थे। शुद्ध जातियों के लक्षण में परिवर्तन करने से जैसे **μ** न्यास, अपन्यास, ग्रह व अंश स्वर बदल देने से अथवा एक या दो स्वर वर्ज्य कर देने से तथा दो या दो से अधिक जातियों को एक में मिला देने से विकृत जातियों की रचना होती थी, जैसे षाडजी और गांधारी को मिला देने से षडजकौशिकी, गांधारी और आर्षभी को मिला देने से आंध्री विकृत जातियां बनती थीं।

जाति और राग एक–दूसरे के पर्यायवाची शब्द कहे जा सकते हैं। जिस प्रकार आजकल राग–गायन प्रचलित है, उसी प्रकार प्राचीन काल में जाति गायन प्रचलित था। स्वर और वर्ण युक्त सुन्दर रचना को जाति कहते हैं। यही परिभाषा राग की भी है। प्राचीनकाल में जाति के दस लक्षण माने जाते थे **μ** ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व, बहुत्व, औडवत्व, षाडवत्व, मन्द्र और तार। इसे भरत ने " दसविधि जाति लक्षणाम" कहा है।

7-3-2 दसविधि जाति लक्षणाम

ग्रह स्वर μ समस्त जातियों में ग्रह स्वर उस स्वर को कहते थे जिससे जाति का गान आरम्भ होता था।

अंश स्वर μ भरत की जातियों में अंश स्वर का सर्वाधिक महत्व था μ जिसमें राग का निवास हो, राग का आविर्भाव होता है, ननाविध स्वर, समूहों में उसका सर्वाधिक प्रयोग हो अंश स्वर में रजकता, रस और रत्ति, गुण का प्राधान्य माना गया है।

तार तथा मन्द्र μ अंश स्वर से लेकर चौथे, पांचवें और सातवें स्वर तक तार की गति है। मंद्र स्थान में स्वरों की गति तीन प्रकार से मानी गई है μ 1. अंश स्वर तक 2. न्यास स्वर तक 3. अपन्यास स्वर तक। तार स्वर वह है जो एक ही सप्तक में होने पर मध्य स्वर से ऊँचा है और मन्द्र स्वर वह है जो मध्य स्वर की अपेखा निम्न है।

न्यास और अपन्यास μ न्यास, अपन्यास की परिभाषा नाट्यशास्त्र में उपलब्ध नहीं है तथापि दत्तिल तथा मतंग के अनुसार 'न्यास स्वर वह है जिस पर गीत की समाप्ति है। शुद्ध जातियों में अंश स्वर ही न्यास स्वर कहलाता है। "अपन्यास वह स्वर है जो गीत के मध्य खण्ड के अंत में प्रयुक्त होता है। न्यास के पहले बीच में कछ अन्य स्वरों पर ठहरा जाता है, ऐसे स्वरों को अपन्यास कहते हैं।

अलपत्व तथा बहुत्व μ जातियों को व्यक्त करने के दो अन्तर मार्ग भरत ते बतलाये हैं। "स्वरों का अल्प अथवा बहुल प्रयोग किया जाता है। जाति में अत्यन्त बहुल स्वर अंश स्वर होता है। अल्पत्व उन स्वरों को कहते हैं जब कुछ स्वरों का प्रयोग अल्प रूप में किय जाये।

षाडवत्व तथा औडवत्व μ सम्पूर्ण जातियों के अतिरिक्त षाड्व तथा औडव जातियों की चर्चा नाट्यशास्त्र में पाई जाती है। षाडव तथा औडव क्रमशः छः स्वरों से युक्त तथा पाँच स्वरों से युक्त स्वरावलियों के निर्देश हैं। भरत के अनुसार कुछ अठारह जातियों में से चार सम्पूर्ण हैं तथा षाडव तथा औडव जातियों की संख्या चौदह हैं।

जाति लक्षण बताते समय भरत ने स्वरों में परस्पर चार प्रकार के सम्बन्ध बताये हैं μ वादी, संवादी, विवादी, अनुवादी। इन सम्बन्धों की स्थापना में 2–2 स्वरों की जोड़ियों की आवश्यकता होती है। भरत के यही चारों सम्बन्ध आज भारतीय संगीत में सर्वमान्य हैं। जिस स्वर को आधार मानकर दूसरे स्वर के साथ संवाद–विवाद या अनुवाद सम्बन्ध स्थापित किया जाय वही आधार स्वर अंश या वादी स्वर कहलाता है।

नाट्य शास्त्र में भरत ने जातियों के अतिरिक्त सात ग्राम रागों का भी उल्लेख किया है। इन रागों का विस्तृत विवरण तो उपलब्ध नहीं है परन्तु उनकी चर्चा भरत ने स्थान–स्थान पर की है। भरत के काल में भी संगीत के शास्त्रकारों ने ग्राम रागों का वर्णन किया है। अतः यह स्पष्ट है कि उस काल में जातियों से रागों की उत्पत्ति एवं उनके विकास का क्रम प्रारम्भ हो चुका था।

7-3-3 ग्राम राग वर्गीकरण

जाति वर्गीकरण के पश्चात् ग्राम राग–वर्गीकरण का जन्म हुआ। सर्वप्रथम मतङ्ग मुनि द्वारा लिखित

'वश्हद्देशी' में ग्राम–राग शब्द प्रयोग किया गया है इसी ग्रन्थ में सर्वप्रथम देशी संगीत का निरूपण किया गया है और रागों की विस्तश्त चर्चा की गईहै। मार्ग संगीत के साथ ही मतंग ने देशी संगीत का भी वर्णन किया है। राग शब्द का प्रयोग मतंग के ग्रंथ की महत्वपूर्ण बात है।

मतंग कहते हैं कि भरत आदि पूर्व आचार्यों ने राग–स्वरूप का वर्णन नहीं किया है। प्रचलित संगीत के आधार पर उसी लक्ष्य और लक्षण का वे भाव–निरूपण कर रहे हैं। मतंग ने रागों के लक्षण और प्रस्तार दिये हैं जातियों और रागों के चलन से युक्त बंदिशों को मतंग और शारंगदेव जातियों और रागों का प्रस्तार करते हैं। राग हमारे प्रचलित संगीत के प्राण है। बृहद्देशी में रागों के लक्षण और प्रस्तार से हमारे वर्तमान संगीत की कड़ी सहज ही प्राचीन संगीत से जुड़ती है। तात्पर्य यह है कि भरतकालीन जाति गायन विकसित होकर मतंग के समय में राग गायन के रूप में प्रचलित हो गया था। सामवेद से स्वर, स्वर से ग्राम, ग्राम से मूर्च्छनाओं से जातियों की उत्पत्ति हुई। जातियों का विकसित रूप ही 'राग' कहलाया।

मतंग ने रागों का वर्गीकरण मुख्यतः ग्राम राग और भाषा राग अथवा देशी राग – इन दो विभागों में किया है। प्राचीन ग्रंथों में 30 ग्राम राग मिलते हैं अर्थात् 18 जातियों से कुल 30 ग्राम राग उत्पन्न माने जाते हैं। इन ग्राम रागों को शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, बेसरा तथा साधारणी, इन पाँच गीतियों में विभाजित किया गया। शुद्ध 7, भिन्ना 5, गौड़ 3, बेसरा 8 और साधारणी गीति में 7 ग्राम राग थे। ग्राम राग ही आगे चलकर आधुनिक रागों में विकसित हुये।

उपयुर्क्त पाँच शैलियों के अतिरिक्त मतंग ने भाषा और विभाषा दो और शैलियों का वर्णन किया है।

मतंग ने अपनी जातियों के नाम भी भिन्न–भिन्न दिये हैं। वे निम्नवत हैं μ

(1) टकी (2) सावीरा (3) मालव पंचम (4) षाडव

(5) वट्टराग (6) हिंडोलक (7) टक्क कोशिका

उपर्युक्त कथित राग ही मतंग के मुख्य राग कहे जा सकते हैं जिनकी उत्पत्ति जातियों से हुई। इन्होंने रागों के तीन मुख्य भेद बतलाये हैं μ शुद्ध, छाया लग और संकीर्ण। जातियों के उन्होंने दस लक्षण वर्णित किये हैं जो आज भी पूर्णतः मान्य है। आज भी मतंग कृत 'वृहद्देशीय' भारतीय संगीत की अनुपम निधि के रूप में मान्य हे।

7-3-4 नारद के अनुसार राज वर्गीकरण

'नारदीय शिक्षा' ग्रन्थ नारद द्वारा 7वीं शताब्दी में लिखा गया था। इस ग्रंथ में सामवेदीय स्वरों का विशेष महत्व देते हुए 7 ग्राम रागों का वर्णन किया गया है जिसके नाम इस प्रकार हैं μ

(1) षाड्व (2) पंचम (3) मध्यम (4) षडज ग्राम (5) साधारिता (6) कौशिका मध्यम (7) मध्यम ग्राम

संगीत मकरन्द' नामक ग्रन्थ के रचयिता के रूप में नारद का उल्लेख आता है। 'संगीत मकरन्द' के संगीताध्याय के तृतीय पाद में नारद ने अपने काल में प्रचलित 93 विभिन्न रागों का अनेक प्रकार से वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। नारद द्वारा रागों के वर्गीकरण हेतु अपनाए गये विभिन्न आधार इस प्रकार हैं μ

1. रागों का समय के आधार पर वर्गीकरण
2. ग्रह स्वर के आधार पर राग वर्गीकरण
3. लिंग के आधार पर राग वर्गीकरण
4. छः पुरुष और उनकी स्त्रियों के रूप में वर्गीकरण
5. रागाग राग

संगीत मकरन्द में वर्णित रागों के वर्ग 'राग रागिनी' पद्धति का आधार बने।

नारद के उपर्युक्त राग वर्गीकरणों का अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि यह वर्गीकरण कोई सुव्यवस्थित वर्गीकरण नहीं है। इनमें भिन्न–भिन्न आधारों पर रागों के वर्गीकरण का औचित्य केई स्पष्टतः निर्धारित नहीं हो पाता। परंतु फिर भी नारद के उपर्युक्त राग वर्गीकरण ऐतिहासिक दशष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

7.4 SUM UP

इस संसार में बिखरे अनन्त ज्ञान के क्रम–बद्ध अध्ययन का एक प्रकार है 'वर्गीकरण'। जिसमें उपलब्ध ज्ञान को अध्ययन की सुविधा की दशष्टि से उसके विशिष्ट गुणों के आधार पर विभिन्न समूहों में विभाजित करते हैं।

प्रस्तुत पाठ में प्राचीन काल में प्रचलित राग वर्गीकरण की विभिन्न प्रणालियों का अध्ययन किया है। इसके अर्न्तगत भरत मुनि द्वारा जाति वर्गीकरण मतंग मुनि द्वारा ग्राम राग वर्गीकरण तथा नारद द्वारा प्रस्तुत राग वर्गीकरण की विभिन्न प्रणालियों का विवेचन किया है।

7.5 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. प्राचीन राग वर्गीकरण का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. भरतमुनि द्वारा जातिवर्गीकरण का विश्लेषणात्मक वर्णन लिखिए।
3. क्या आप समझते हैं कि रागरागिणी वर्गीकरण का आधार प्राचीनकाल में मिलता है। व्याख्या कीजिए।
4. 'राग' शब्द का उल्लेख सर्वप्रथम प्राचीन काल के किस ग्रंथ में उपलब्ध है। विस्तारपूर्वकर वर्णन कीजिए।
5. भरत द्वारा वर्णित जातियों के नाम लिखो।

7.6 REFERENCE/BOOKS

1. राग परिचय
2. हिन्दुस्तानी संगीत में राग वर्गीकरण
3. भारतीय संगीत "एक ऐतिहासिक विश्लेषण"

******

Course No. MU-401 **Section - B**

Semester - IV **Lesson - 8**

KNOWLEDGE OF THE FOLLOWING BOOKS :-

(i) Natya Shastra **(ii) Sangeet Ratnakar.**

8.1 Introduction.

8.2 Objectives.

8.3 Natya Shastra by Bharat Muni

8.3.1 Chapter of Natya Shastra (related to Music)

8.3.2 Sum up.

8.4 Sangeet Ratnakar by Pandit Sarangdev.

8.4.1 Seven Chapter of Sangeet Ratnakar

8.4.2 Sum up.

8.5 Examination Oriented Questions.

8.6 References/Books.

8.1 INTRODUCTION

संगीत के जन्म के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपनी अपनी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार विभिन्नि विचार व्यक्त किए हैं। संगीत की उत्पत्ति सर्वप्रथम वेदों के निर्माता ब्रह्म द्वारा हुई, ब्रह्म ने यह कला शिव को दी और शिव द्वारा सरस्वती को प्राप्त हुई। सरस्वती से संगीत कला का ज्ञान नारद को प्राप्त हुआ, नारद ने स्वर्ग के गन्धर्व, किन्नर तथा अप्सराओं को संगीत शिक्षा दी वहाँ से ही भरत आदि ऋषि इस कला में परांगत होकर भूलोक में संगीत के प्रचारार्थ अवतरित हुए।

इन सभी बातों का ज्ञान हमें ग्रंथों द्वारा होता है ग्रंथ हर कार्य की आधार शिला है भारतीय संगीत की आधारशिला भरत कृत नाट्य शास्त्र और संगीतरत्नाकर को माना गया है।

8.2 उद्देश्य (OBJECTIVES)

1. छात्रों की ग्रंथों के प्रति रुचि उत्पन्न करना।
2. छात्रों को नाट्यशास्त्र व संगीतरत्नाकर के विषय में नवीन ज्ञान की प्राप्ति करना।
3. छात्रों की चिन्तन एवं तार्किक शक्ति का विकास करना
4. लुप्त व प्रचलित संगीत उपयोगी वाक्यों व शब्दों के प्रति उनकी रुचि उत्पन्न करना।
5. ग्रंथों के उद्भव व विकास के लिए उन्हें पूर्ण ज्ञान प्रदान कराना।

8.3 भरत कृत नाट्यशास्त्र (Natya Shastra)

नाट्यशास्त्र ग्रंथ महर्षि भरत द्वारा रचित सर्वाधिक महत्वपूर्ण ग्रंथ है, नाट्यशास्त्र नाट्यकला पर व्यापक ग्रंथ में शास्त्रीय संस्कृत रंगमंच के सभी पहलुओं का वर्णन है। माना जाता है कि इसे तीसरी शताब्दी से पहले भरतमुनि ने लिखा था। इसमें उस समय के संगीत के बारे में काफी जानकारी दी गई है। भरतकृत नाट्य शास्त्र में 36 अध्याय हैं।

दंत कथा

भरतमुनि के नाट्य शास्त्र के विषय में ऐसी दंत कथा है कि त्रेता युग में लोग दुःख, आपत्ति से पीड़ित हो रहे थे। इन्द्र की प्रार्थना पर ब्रह्मा चारों वर्णों और विशेष रूप से शूद्रों के मनोरंजन और अलौकिक आनंद के लिए 'नाट्यवेद' नामक पांचवें वेद का निर्माण किया। इस वेद का निर्माण ऋग्वेद में से पाठ्य वस्तु, सामवेद से गान, यजुर्वेद में से अभिनय और अथर्ववेद में से रस लेकर किया गया है। भरतमुनि को उसका प्रयोग करने का कार्य सौंपा गया।

नाट्य शास्त्र का स्वरूप

'नाट्यशास्त्र' का जो रूप इस समय उपलब्ध है, उसको भरत के वंशजो μ कोहल, दत्तिल, वत्स, शांडिल्य तथा धूर्दित इत्यादि विद्वानों द्वारा संग्रहित माना जाता है।

नाट्यशास्त्र का जो रूप आजकल उपलब्ध है, वह छः सहस्र श्लोकों में होने के कारण षट्साहस्री कहलाता है।

8.3.1 नाट्यशास्त्र के अध्याय

नाट्यशास्त्र में कुल छत्तीस अध्याय हैं, इन अध्यायों में से अठाईस से तैंतीसवें अध्याय तक छ : अध्यायों में संगीत के समस्त सिद्धसन्तों का वर्णन किया गया है।

1. इसके अतिरिक्त छठे अध्याश में सिहान्तों का लक्षण और व्याख्या, भाव का लक्षण और व्याख्या, आठ रसों का उनके उपकरणों सहित वर्णन, रसों के देवता और वर्ण आदि।

2. सातवें अध्याय में भाव, विभाव एवं अनुभाव आदि की सामान्य व्याख्या, स्थायी, व्यभिचारी और सात्विक भावों का विवरण दिया गया है।

3. अट्ठाइसवें अध्याय में वाद्यों के प्रकार, श्रुति स्वर, ग्राम, मूर्च्छना, जाति भेद एवं उनके लक्षण, ग्रह, अंश, न्यास, अपन्यास, अल्पत्व–बहुत्व, षाडव–औडव आदि पर प्रकाश डाला है।

4. 29वें अध्याय में विभिन्न प्रकार की वीणा और उनकी वादन विधि एवं जातियों के रसानुकूल प्रयोग का विवरण दिया गया है। साथ में स्वरों का रसों में विनियोग, तीन स्थान, काकु, अलंकार आदि का वर्णन है।

5. 30वें अध्याय में सुषिर वाद्यों का विवरण है, इसमें उस समय के सभी प्रकार के सुषिर वाद्यों का विवरण मिलता है।

6. 31वें अध्याय में कला, लय और विभिन्न वादकों का वर्णन है।

7. 32वें अध्याय में गायक–वादक के गुण, ध्रुव के पाँच भेद, छन्द आदि का वर्णन है।

8. 33वें अध्याय में अवनद्ध वाद्यों की उत्पत्ति भेद, वादन विधि, वादकों के लक्षण, 18 जातियाँ आदि पर चर्चा की गई है।

8.3.2 SUMUP

भरत ने नाट्य शास्त्र में नाद के एक स्थान में कई नाद माने हैं इसके अतिरिक्त 22 श्रुतियाँ तथा 7 शुद्ध स्वरों का वर्णन किया है। विकृत स्वरों के अंतर्गत भरत ने 2 विकृत स्वर माने हैं अंतर गंधार तथा काकली निषाद। इसके अतिरिक्त भरत ने सारणा का वर्णन किया है दो ग्राम, 14 मुर्च्छनाएं तथा 18 प्रकार की जातियों का वर्णन भी महर्षि भरत ने किया है। नाट्शास्त्र में चित्रा व विपंची आदि वीणाओं की चर्चाहै। भरत की वीणा 'मतकोकिला' कही गई है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि भरत मुनि का नाट्यशास्त्र हमारे संगीत का प्रमुख स्तंभ है। नाट्यशास्त्र में वर्णित संगीत के सिद्धान्त आज भी हमारे संगीत का आधार है। ऐसा जान पड़ता है जब तक संगीत में शास्त्र के सिद्धान्तों का व्यवहार होता रहेगा, नाट्यशास्त्र एवं उसके सिद्धान्त संगीत के व्याकरण की भान्ति कार्य करते रहेंगे।

8.4 SANGEET RATNAKAR BY PANDIT SARANG DEV

संगीतरत्नाकर 13वीं शताब्दी का श्रेष्ठतम ग्रन्थ है। शार्गदेव का समय सन् 1210 ई. के लगभग माना जाता है। ये देवगिरि के यादव वंशय राजा के दरबारी संगीतज्ञ थे। गांधर्व तथा उसके परवर्ती विकास की जानकारी के लिए शार्गदेव का संगीतरत्नाकर ही आधार ग्रन्थ है। उत्तर तथा दक्षिण किसी भी देश–प्रदेश के ग्रन्थकार क्यों न हों, इनके ग्रन्थ को ही प्रामाणिक मानते रहे हैं। ऐसा माना जाता है कि संगीत रत्नाकर पर प्रायः सात टीकाओं का सृजन हुआ है, किन्तु वर्तमान में संस्कृत की दो ही प्रकाशित टीकाएँ उपलब्ध हैं एक सिंह भूपाल की और दूसरी कल्लिनाथ की।

संगीतरत्नाकर के आरम्भ में ही संगीत की परिभाषा दी गई है। गीत, वाद्य तथा नृत्य ये तीनों ही संगीत कहलाते हैं।

8.4.1 संगीतरत्नाकर के अध्याय

संगीतरत्नाकर में सात अध्याय हैं μ स्वरगताध्याय, राग विवेकाध्याय, प्रबन्धाध्याय, प्रकीर्णाध्य, तालाध्याय, वाद्याध्याय तथा नर्तनाध्याय।

- **स्वरागताध्याय**

  संगीतरत्नाकर के प्रथम अध्याय में नाद का स्वरूप नादोत्पत्ति और उसके भेद, सारणाचतुष्टयी ग्राम, मूर्च्छना, तान वर्णन, स्वर और जाति साधारण वर्ण, अलंकार और जातियों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

- **राग विवेकाध्याय**

  द्वितीय अध्याय में ग्राम राग और उनके विभाग तथा रागांग व भाषांग आदि का स्पष्टीकरण और देशी राग व उनके नामों का उल्लेख है। शार्गदेव ने ग्राम रागों की कुल संख्या तीस मानी है तथा पाँच गीतियों के आधार पर इनका वर्गीकरण पाँच वर्गों में किया है। शुद्धा गीति पर आधारित ग्रामराग–सात, भिन्नागीति μ पाँच, गौड़ी μ तीन, वेसरा–आठ तथा साधारणी μ सात ग्राम रागों से युक्त है। अतः इनकी कुल संख्या तीस है।

1. तृतिय अध्याय में वाग्गेयकार के लक्षण, गायक के गुण–दोष और स्थाय इत्यादि का विवरण है।
2. चतुर्थ अध्याय में गान के निबद्ध और अनिबद्ध भेद, धातु व प्रबन्ध के भेद और अंगों आदि का विवरण उपलब्ध है।
3. पंचम अध्याय में तालों के विषय में वर्णन प्राप्त होता है। मार्ग ताल गीत देशी ताल, 121 तालों का परिचय भी दिय गया है।
4. छठे अध्याय में वाद्यों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया गया है। वीणा तत वाद्य के अंतर्गत है। शार्गदेव ने जिन प्रसिद्ध वीणाओं का उल्लेख किया है, वे है चित्रा, विपंची, मत्तकोकिला, आलपिनी किन्नर, पिनाकी एवं निः शंक। सुषिर वाद्यों में μ वंश, पाव पाविका, मुरली एवं मधुकरी। शृंग श्रेणी के वाद्यों में काहला, तुण्डुकिनी तथा शंख आदि उल्लेख योग्य हैं। चर्मवाद्यों में परह, मर्दल, हुडुक्का, घट, ढक्का, रूंजा, डमरू, दुंदभि भेरी तथा तुम्बकी आदि। क्षुद्रघंटिका, जयघण्टा, कम्रा तथा पट्टी आदि का वर्णन किया गया है।
5. सातवें अध्याय में नृत्य और नाट्य सम्बन्धी वर्णन प्राप्त होता है। शरीर के अंगों व अभिनय आदि का वर्णन नर्तनाध्याय का वर्णय विषय है।

8.4.2 SUMUP

शार्गदेव ने अपने समय में प्रचलित व्यवहृत रागों को दस वर्गों में विभाजित किया है। भरत कृत 'नाट्यशास्त्र' एवं 'बृहद्धेशी' के आधार पर शार्गदेव ने अपने ग्रंथ का सृजन किया था। पर उनके काल में जातियों का लोप हो चुका था। वर्तमान समय में हम जिन वाद्यों का प्रयोग कर रहे हैं, उनसे मिलते–जुलते लगभग सभी वाद्यों का वर्णन संगीतरत्नाकर में किया गया है। संगीतरत्नाकर में वर्णित वाद्यों का प्रभाव वर्तमान समय में व्यवहृत वाद्यों परर स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है।

8.5 EXAMINATION ORIENTED QUESTIONS

1. नाट्यशास्त्र में संकिलत संगीत सम्बंधी अध्यायों का विस्तार पूर्वक वर्णन करो।
2. नाट्यशास्त्र किस शताब्दी में लिखा गया और संगीत में इसका क्या महत्त्व है।
3. संगीतरत्नाकर के छठे व सातवें अध्याय का विस्तारपर्वक वर्णन करें।
4. संगीतरत्नाकर में संकिलत रागविवेकाध्याय का वर्णन अपने शब्दों में करें।
5. संगीतरत्नाकर को सप्ताध्यायी ग्रन्थ क्यों कहा जाता है। विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिए।

8.6 REFERENCES/BOOKS

1. संगीत रत्नावली – अशोक कुमार 'यमन'
2. भारतीय संगीत का इतिहास – भगवतशरण शर्मा
3. संगीत विशारद –वसन्त
4. संगीत मैनुल – डॉ. निशा रावत

****